



2026:AHC-LKO:6993-DB

ए.एफ.आर.

उच्च न्यायालय, इलाहाबाद

(लखनऊ)

जेल अपील संख्या - 1317/2012

सोबरन लाल

... अपीलार्थी(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

... प्रत्यर्थी(गण)

अपीलार्थी के अधिवक्ता: व्यक्तिगत रूप से जेल अपील, निर्मल सिंह यादव, स्मृति

प्रत्यर्थी के अधिवक्ता: शासकीय अधिवक्ता

सुरक्षित तिथि: 31.10.2025

सुनाया गया: 30.01.2026

न्यायालय संख्या - 9

माननीय न्यायमूर्ति राजेश सिंह चौहान,

माननीय न्यायमूर्ति अवधेश कुमार चौधरी,

(माननीय न्यायमूर्ति अवधेश कुमार चौधरी, द्वारा प्रदत्त)

1. तत्मान जेल अपील, अपीलार्थी/अभियुक्त- सोबरन लाल द्वारा विशेष/अपर सत्र न्यायाधीश, लखीमपुर खीरी द्वारा (i) मुकदमा अपराध संख्या 201/2008 (राज्य बनाम हरि ओम उर्फ बंटू एवं अन्य) से उत्पन्न सत्र विचारण संख्या 854/2008, जिसके द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत मूल अपराधों के लिए आजीवन कारावास और 10,000/- रुपये के अर्थदंड एवं अर्थदंड की शर्त, धारा 307 के तहत 10 वर्ष के सश्रम कारावास और 5,000/- रुपये के अर्थदंड एवं अर्थदंड की शर्त, धारा 393 के तहत 07 वर्ष के सश्रम कारावास और 3,000/- रुपये के अर्थदंड एवं अर्थदंड की शर्त के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया था, तथा (ii) मुकदमा अपराध संख्या 203/2008 (राज्य बनाम सोबरन लाल) से उत्पन्न सत्र विचारण संख्या 855/2008 में आयुध अधिनियम की धारा 3/25 के तहत 03 वर्ष के सश्रम कारावास और 5,000/- रुपये के अर्थदंड एवं अर्थदंड की शर्त के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया था, में पारित साझा निर्णय एवं आदेश दिनांक 04.08.2012 के विरुद्ध अपील दायर की गई है। दंड प्रक्रिया संहिता (जिसे आगे "दंड प्रक्रिया संहिता" के रूप में संदर्भित किया गया है) की धारा 427 के आलोक में सभी दंडादेशों को एक साथ चलाने का निर्देश दिया गया था।

अभियोजन का मामला

2. अभियोजन का मामला, जैसा कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय में विस्तृत किया गया है, संक्षेप में नीचे संपुटित है:

2.1 शिकायतकर्ता- नीरज कुमार सोनी (पी.डब्ल्यू.-1) के संस्करण के अनुसार, घटना के दिन यानी 29.02.2008 को शाम 5.30 बजे, जब वह गुलौली रोड पर स्थित अपनी आभूषण की दुकान पर बैठा था,

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



मोटरसाइकिल पर सवार दो व्यक्तियों ने उसके बड़े भाई- मनोज सोनी को लूटने का प्रयास किया और उस बैग को छीनने की कोशिश की जिसमें उसका भाई घर लौटते समय आभूषण और नकदी ले जा रहा था।

2.2 शोर मचाने पर, पड़ोस के स्थानीय निवासी जिनमें सौर आलम (पी.डब्ल्यू.-3), नरेंद्र कुमार वर्मा (पी.डब्ल्यू.-4), सुरेंद्र चंद्र गुप्ता, संजय मिश्रा आदि शामिल थे, मौके पर एकत्र हो गए और बदमाशों को चुनौती दी। इस पर, बदमाशों में से एक ने अपनी पैंट से पिस्तौल निकाली और जान से मारने की नियत से उसके बड़े भाई- मनोज सोनी पर गोली चला दी, जो उसके भाई के शरीर के बाईं ओर लगी, जिससे उसे जानलेवा गोली का घाव हो गया। जब मुखबिर/शिकायतकर्ता ने अपने भाई को बचाने की कोशिश की और हस्तक्षेप किया, तो दूसरे बदमाश ने उसे जान से मारने की नियत से कई बार चाकू से हमला किया, जिससे उसके कंधे और हाथों में चोट आई।

2.3 किसी तरह, पड़ोसियों की सहायता से, दोनों बदमाशों को मौके पर ही एक पिस्तौल, जिंदा कारतूस, खाली कारतूस और एक चाकू के साथ उनकी मोटरसाइकिल संख्या यूपी25यू3803, चेसिस नंबर डीएसवीबीएमई34762 सहित पकड़ लिया गया।

2.4 पूछताछ करने पर, उपर्युक्त बदमाशों में से एक ने अपना नाम हरि ओम उर्फ बंटू, पुत्र श्रीराम शर्मा, निवासी नई बस्ती, पावर हाउस के सामने, जी.टी. रोड, कस्बा और थाना फतेहगंज पूर्वी बताया और दूसरे ने अपना नाम सोबरन लाल यादव (अपीलार्थी), पुत्र ओमकार यादव, निवासी सैदपुर मांझा, थाना फतेहगंज पूर्वी, जिला बरेली बताया।

2.5 इसके पश्चात, उसके घायल भाई- मनोज सोनी को पड़ोसियों और उसके छोटे भाई पंकज सोनी (पी.डब्ल्यू.-2) द्वारा सरकारी अस्पताल, मोहम्मदी ले जाया गया, जहाँ उसे मृत घोषित कर दिया गया। उक्त घटना मोहम्मदी के पूरे पड़ोस में आतंक का कारण बनी, जिसके परिणामस्वरूप दहशत फैल गई और इलाके की दुकानें और पूरा बाजार बंद हो गया, जिससे लोक व्यवस्था में व्यवधान उत्पन्न हुआ।

2.6 शिकायतकर्ता- नीरज कुमार सोनी (पी.डब्ल्यू.-1) द्वारा दी गई उपर्युक्त लिखित सूचना (प्रदर्श-का-1) के आधार पर, उक्त घटना के संबंध में दिनांक 29.02.2008 को शाम 18:15 बजे (i) हरि ओम उर्फ बंटू और (ii) सोबरन लाल यादव के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 393, 302, 307 के तहत मुकदमा अपराध संख्या 62/2008 (प्रदर्श का-14) दर्ज किया गया। उपर्युक्त एफ.आई.आर. के संबंध में प्रविष्टि जी.डी. (प्रदर्श का-15) में भी की गई थी। उपर्युक्त घटना की विवेचना निरीक्षक (प्रभारी)- देवी दयाल सिंह (पी.डब्ल्यू.-7) को सौंपी गई।

2.7 उपरोक्त सूचना के आधार पर, विवेचनाधिकारी, थाना-प्रभारी देवी दयाल सिंह (पी.डब्ल्यू.-7) तुरंत 29 जनवरी, 2008 को शाम 18:35 बजे मौके पर पहुँचे और पाया कि पास के लोग उक्त दोनों बदमाशों को पकड़े हुए थे।

2.8 जब निरीक्षक (प्रभारी) देवी दयाल सिंह ने घटना की पूछताछ की, तो शिकायतकर्ता- नीरज कुमार सोनी (पी.डब्ल्यू.-1) ने बताया कि दोषसिद्ध - सोबरन लाल (अपीलार्थी) ने पिस्तौल निकाली और जान से मारने की नियत से उसके भाई- मनोज सोनी पर गोली चला दी, जिसके बाद उसका भाई गिर गया। जब शिकायतकर्ता ने अपने भाई के पास पहुँचने और उसे बचाने का प्रयास किया, तो सह-अभियुक्त हरि ओम ने उसे चाकू मारा और चोटें पहुँचाईं। शोर सुनकर घटनास्थल पर तमाम लोग जमा हो गए और

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



उनकी सहायता से शिकायतकर्ता- नीरज कुमार सोनी (पी.डब्ल्यू.-1) और अन्य ने सोबरन लाल और हरि ओम दोनों को एक पिस्तौल, जिंदा कारतूस और एक चाकू के साथ घटनास्थल पर ही पकड़ लिया। शिकायतकर्ता के भाई, मनोज सोनी ने बाद में घटना में लगी गोली की चोटों के कारण दम तोड़ दिया।

2.9 साक्षियों- नरेंद्र कुमार वर्मा (पी.डब्ल्यू.-4) और संजय कुमार की उपस्थिति में, अभियुक्त व्यक्तियों सोबरन लाल और हरि ओम को मौके पर ही गिरफ्तार कर लिया गया। दोषसिद्ध "सोबरन लाल" के कब्जे से, घटना में प्रयुक्त .315 बोर की एक देशी पिस्तौल, एक जिंदा कारतूस और एक खाली कारतूस बरामद किया गया। हरि ओम के कब्जे से .315 बोर की एक देशी पिस्तौल, एक जिंदा कारतूस और एक चाकू, जिसे उसने जमीन से उठाया था, बरामद किया गया। बरामद लेखों को कब्जे में लेने के बाद, बरामदगी मेमो (प्रदर्श का-3) तैयार किया गया और विधिवत सील किया गया। इसके पश्चात, बरामद वस्तुओं के साथ अभियुक्तों को संबंधित थाने लाकर दाखिल किया गया।

2.10 बरामदगी मेमो के आधार पर, सोबरन लाल और हरि ओम उर्फ बंटू दोनों के विरुद्ध आयुध अधिनियम की धारा 3/25 और 4/25 के तहत थाना-मोहम्मदी में दिनांक 29.02.2008 को रात्रि 20:25 बजे एक अलग एफ.आई.आर. संख्या 64/2008 (प्रदर्श-का-20) दर्ज की गई। मुकदमा अपराध संख्या के पंजीकरण के संबंध में संबंधित प्रविष्टियाँ जी.डी. (प्रदर्श का-21) में की गईं और एस.आई.- विजय सिंह सोलंकी (पी.डब्ल्यू.-6) को मामले का विवेचनाधिकारी नियुक्त किया गया।

2.11 विवेचना के दौरान, विवेचनाधिकारी-निरीक्षक (प्रभारी)- देवी दयाल सिंह (पी.डब्ल्यू.-7) ने "पंचनामा" (प्रदर्श का-2) और अन्य प्रासंगिक कागजात तैयार किए। उन्होंने घटनास्थल से खून से सनी मिट्टी और सादी मिट्टी के नमूने भी एकत्र किए और उसके संबंध में बरामदगी मेमो (प्रदर्श का-4) तैयार किया। विवेचना को आगे बढ़ाते हुए, और साक्षियों की निशानदेही पर, विवेचनाधिकारी ने घटनास्थल का नज़री नक्शा (प्रदर्श का-6) और घटनास्थल से शस्त्र/पिस्तौल की बरामदगी से संबंधित नज़री नक्शा (प्रदर्श का-16) तैयार किया।

2.12 विवेचना पूरी होने पर, और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के तहत कई साक्षियों के बयान दर्ज करने और विभिन्न सामग्रियों और दस्तावेजों को एकत्र करने के बाद, पुलिस ने संबंधित न्यायालय के समक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 307, 393 के तहत आरोप पत्र प्रस्तुत किया (प्रदर्श-का-7)। आरोप पत्र के साथ मृतक मनोज सोनी की पोस्टमार्टम रिपोर्ट (प्रदर्श-का-23) और मुखबिर/शिकायतकर्ता-नीरज सोनी की चोट रिपोर्ट (प्रदर्श-का-5) संलग्न थी। सोबरन लाल और हरि ओम के कब्जे से पिस्तौल की बरामदगी के संबंध में उनके विरुद्ध आयुध अधिनियम की धारा 3/25 और 4/25 के तहत एक अलग आरोप पत्र (प्रदर्श-का-17) भी दाखिल किया गया था।

विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही

3. आरोप पत्र में दो अभियुक्तों, सोबरन लाल (अपीलार्थी) और हरि ओम उर्फ बंटू के नाम थे। इसके पश्चात, आदेश दिनांक 01.10.2008 के माध्यम से मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया गया। आदेश दिनांक 21.01.2009 के माध्यम से अभियुक्त-सोबरन लाल के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए, जिसके लिए उसने दोष स्वीकार नहीं किया और विचारण की मांग की। यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि आदेश दिनांक 10.06.2011 के माध्यम से, सह-अभियुक्त-हरि ओम के निरंतर फरार रहने के कारण, उसका विचारण अलग कर दिया गया

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



और उक्त हरि ओम के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 82/83 के तहत कार्यवाही शुरू करने का आदेश दिया गया।

4. अभियोजन पक्ष ने अपने मामले को सिद्ध करने के लिए निम्नलिखित साक्षियों की जांच की:

पी.ड ब्ल्यू.-1	नीरज कुमार सोनी	शिकायतकर्ता/मृतक का भाई
पी.ड ब्ल्यू.-2	पंकज सोनी	चश्मदीद गवाह
पी.ड ब्ल्यू.-3	सौर आलम	चश्मदीद गवाह
पी.ड ब्ल्यू.-4	नरेंद्र कुमार वर्मा	चश्मदीद गवाह
पी.ड ब्ल्यू.-5	डॉ. एस.यू.पी. सिन्हा	प्रासंगिक समय पर प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, मोहम्मदी में तैनात
पी.ड ब्ल्यू.-6	विजय सिंह	विवेचनाधिकारी
पी.ड ब्ल्यू.-7	देवी दयाल सिंह	विवेचनाधिकारी
पी.ड ब्ल्यू.-8	हेड कांस्टेबल श्री राम चौधरी	साक्षियों के बयान दर्ज किए और नज़री नक्शा तथा आरोप पत्र को सिद्ध किया

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



पी.ड ब्ल्यू.-9	रामायण सिंह	चिक रिपोर्ट और जनरल डायरी को सिद्ध किया
पी.ड ब्ल्यू.-1 0	डॉ. आर.आर. अग्निहोत्री	डॉ. आर.आर. अग्निहोत्री ने मृतक मनोज सोनी का पोस्टमार्टम किया।

4.1 अभियोजन द्वारा प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य के अतिरिक्त, प्रदर्श का-1 से प्रदर्श का-23 तक विभिन्न दस्तावेजी साक्ष्य भी सिद्ध किए गए। विधि विज्ञान प्रयोगशाला (एफ.एस.एल.) की रिपोर्ट भी अभिलेख पर लाई गई जो केस फाइल में रिपोर्ट 71-का के रूप में शामिल है।

4.2 अभियोजन साक्ष्य की समाप्ति के बाद, दिनांक 25.06.2012 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत अपीलार्थी- सोबरन लाल का बयान दर्ज किया गया, जिसमें उसने अभियोजन के मामले को पूरी तरह से नकार दिया। उसने सभी आरोपों, बरामदगियों और अभियोजन साक्षियों के बयानों से इनकार करते हुए दावा किया कि उसे और सह-अभियुक्त को झूठा फँसाया गया है। उसने आगे दावा किया कि कथित घटना कभी हुई ही नहीं और तर्क दिया कि उसे और अन्य सह-अभियुक्त को कथित घटना से तीन दिन पहले ही गिरफ्तार कर लिया गया था।

4.3 अपीलकर्ता—सोबरन लाल ने अपने बचाव के समर्थन में कोई भी बचाव साक्षी प्रस्तुत नहीं किया है।

4.4 अभिलेख पर उपलब्ध मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के परिशीलन के आधार पर, विद्वान विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थी- सोबरन लाल यादव के विरुद्ध आरोपों को संदेह से परे सिद्ध करने में सफल रहा है और तदनुसार आक्षेपित निर्णय दिनांक 04.08.2012 के माध्यम से अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 393 और 307 सहपठित आयुध अधिनियम की धारा 3/25 के तहत दोषसिद्ध किया।

4.5 दंडादेश के बिंदु पर, इस शमनकारी दलील के बावजूद कि अपीलार्थी पर 70 वर्षीय विधवा माँ, पत्नी और चार बच्चे (जिनमें दो बेटियाँ हैं) आश्रित हैं, विद्वान विचारण न्यायालय ने अपराध की गंभीरता और इसके सामाजिक प्रभाव को देखते हुए अपीलार्थी को धारा 302 के तहत आजीवन कारावास और अर्थदंड, धारा 307 के तहत 10 वर्ष का सश्रम कारावास और अर्थदंड, धारा 393 के तहत 07 वर्ष का सश्रम कारावास और अर्थदंड, तथा धारा 3/25 आयुध अधिनियम के तहत 03 वर्ष का कारावास और अर्थदंड की सजा सुनाई।

इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही

5. दोषसिद्धि और दंडादेश से व्यथित होकर, वित्तीय बाधाओं के कारण, अपीलार्थी ने वर्तमान जेल अपील विभिन्न आधारों पर दायर की, जिनमें शामिल हैं: (i) साक्षियों के बयानों में विसंगतियाँ, (ii) अपीलार्थी का बचाव कि उसने वास्तव में चिकित्सा कारणों से मृतक के पास अपने आभूषण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



गिरवी रखे थे, लेकिन पैसे प्राप्त करने के बावजूद मृतक ने आभूषण वापस नहीं किए और उसे झूठा फँसा दिया क्योंकि भीड़ में से किसी ने मृतक पर गोली चलाई थी जिससे उसकी मृत्यु हुई, (iii) आभूषण की दुकान पर एकत्र भीड़ द्वारा अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्त को पीटा गया और गंभीर रूप से घायल किया गया, (iv) घटना को सिद्ध करने में पी.डब्ल्यू.-1 (नीरज कुमार), पी.डब्ल्यू.-2 (पंकज), पी.डब्ल्यू.-3 (सौर आलम) और पी.डब्ल्यू.-4 (नरेंद्र कुमार वर्मा) के बयानों में विसंगतियाँ हैं, (v) आक्षेपित निर्णय न्याय के हित में नहीं था।

5.1 प्रारंभ में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि अपीलार्थी 17 वर्ष और 8 महीने से अधिक का कारावास भुगत चुका है और साउदान सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2023) 17 एससीसी 446 में माननीय शीर्ष न्यायालय के निर्णय के आलोक में जमानत की मांग की।

5.2 हालांकि, 2012 से अपील के लंबे समय तक लंबित रहने और पेपर बुक तैयार होने को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने दोनों पक्षों से अपील के गुण-दोष पर तर्क देने का आग्रह किया। दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता अपील के गुण-दोष पर ही बहस करने के लिए सहमत हुए। यह न्यायालय सुश्री स्मृति और श्री एस.पी. सिंह, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता के प्रयासों की सराहना करता है, जिन्होंने न्यायालय के अनुरोध को स्वीकार किया और अल्प सूचना पर अपील पर बहस की।

5.3 दोनों पक्षों को संबंधित वाद विधियों के साथ अपने लिखित तर्क/अभ्यावेदन प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता भी दी गई।

पक्षकारों की ओर से तर्क

6. अपीलार्थी की विद्वान अधिवक्ता सुश्री स्मृति और राज्य की ओर से अपर शासकीय अधिवक्ता (ए.जी.ए.) श्री एस.पी. सिंह को सुना गया।
7. अपीलार्थी की विद्वान अधिवक्ता ने पुरजोर तर्क दिया कि आक्षेपित दोषसिद्धि विचारणीय नहीं है, क्योंकि इसमें गंभीर तथ्यात्मक विसंगतियाँ, साक्ष्य संबंधी कमजोरियाँ हैं, और अभियोजन पक्ष अपीलकर्ता की ओर से किसी मकसद या आपराधिक इरादे को साबित करने में विफल रहा है। यह तर्क दिया गया कि अभियोजन पक्ष का पूरा मामला ऐसे गवाहों पर आधारित है जिनका मामला में निजी हित है और जिनकी गवाही अविश्वसनीय है—विशेष रूप से P.W.-1 की गवाही— जो कि घटना का चश्मदीद गवाह है और मृतक का सगा भाई है; और यह कि अभियोजन पक्ष के पूरे वृत्तांत की मूल बुनियाद ही अपने आप में संदेहास्पद है।
8. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया अगला तर्क यह है कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थी के विरुद्ध कथित अपराध के लिए कोई उद्देश्य स्थापित करने में विफल रहा। उद्देश्य के प्रमाण के अभाव में, विशेष रूप से पारिस्थितिक और हितबद्ध साक्ष्य पर आधारित मामले में, संदेह का लाभ अपीलार्थी के पक्ष में जाना चाहिए।
9. अभियोजन पक्ष के अंतर्विरोधों की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए, विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि हालांकि एफ.आई.आर. में मोटरसाइकिल संख्या यूपी25यू3803 और एक विशिष्ट चेसिस नंबर का उल्लेख किया गया है जिसे अभियुक्त का बताया गया है; लेकिन बाद में, अभियोजन ने स्वीकार किया कि मोटरसाइकिल का अभियुक्त से कोई संबंध नहीं था, और

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



निरीक्षण पर चेसिस नंबर भी दिखाई नहीं दे रहा था, जिससे अभियोजन के मामले की विश्वसनीयता गंभीर रूप से कम हो जाती है।

10. यह तर्क दिया गया कि पंचायतनामा की कार्यवाही के दौरान, किसी भी पंच साक्षी ने अपीलार्थी को कोई भूमिका नहीं दी या यह नहीं कहा कि उसने मृतक पर गोली चलाई थी। इसके अलावा, मृतक द्वारा पहने गए कपड़ों के संबंध में पी.डब्ल्यू.-1, डॉक्टर और विवेचनाधिकारी के बयानों के बीच विसंगतियां अनिश्चितता को दर्शाती हैं, जिससे पता चलता है कि अभियोजन बुनियादी तथ्यों को भी स्थापित करने में विफल रहा है।
11. विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि डकैती का आरोप अपुष्ट रहा, क्योंकि कोई बैग, आभूषण या नकदी कभी बरामद नहीं की गई, न ही प्रदर्शित की गई और न ही साक्षियों के माध्यम से सिद्ध की गई। इस बात पर जोर दिया गया कि हालांकि डॉक्टर (पी.डब्ल्यू.-10) ने शरीर से एक गोली की बरामदगी का दावा किया, लेकिन न तो वह गोली और न ही संबंधित एक्स-रे प्लेट न्यायालय के समक्ष पेश की गई। बैलिस्टिक, फॉरेंसिक और वैज्ञानिक साक्ष्यों की अनुपस्थिति, और इस अनिश्चितता के साथ कि किस हथियार का उपयोग किया गया था, अभियोजन के मामले को कमजोर करती है। विचारण के दौरान दो देशी पिस्तौलें अभिलेख पर दिखाई गईं, और पुलिस खुद यह पता नहीं लगा सकी कि मृतक की हत्या के लिए कथित तौर पर किस हथियार का इस्तेमाल किया गया था। इसके अलावा, पी.डब्ल्यू.-1 को लगी चोटों के बारे में डॉक्टर ने राय दी कि वे साधारण थीं और संभवतः स्वयं द्वारा कारित थीं। खून से सनी मिट्टी पर फॉरेंसिक रिपोर्ट अनिर्णायक थी, और यहाँ तक कि नज़री नक्शा भी साक्षियों और अभियुक्तों की स्थिति दर्शाने में विफल रहा।
12. अपीलार्थी की विद्वान अधिवक्ता ने आगे ज़ोरदार ढंग से यह दलील दी कि अपीलकर्ता ने, Cr.P.C. की धारा 313 के तहत अपने बयान में, घटना से तीन दिन पहले अपनी अवैध हिरासत का आरोप लगाया था, जिससे जाँच की निष्पक्षता पर गंभीर संदेह पैदा होता है। मामले के गुण-दोष के आधार पर, यह तर्क दिया गया है कि I.P.C. की धारा 302 के आवश्यक तत्व सिद्ध नहीं होते हैं, क्योंकि अभियोजन पक्ष किसी भी मकसद या आपराधिक आशय को साबित करने में विफल रहा है।
13. वैकल्पिक रूप से, विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया कि यदि अभियोजन के मामले को स्वीकार भी कर लिया जाए, तो घटना बिना किसी पूर्वचिंतन के अचानक स्थिति में हुई थी, और भीड़ जमा होने के कारण डर के मारे एक ही गोली चलाई गई थी। यह मामला, अधिक से अधिक, IPC की धारा 304 के भाग I या II के अंतर्गत आएगा। इसके लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अतुल ठाकुर बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, (2018) 2 एससीसी 496 के निर्णय पर भरोसा किया गया है; जहाँ समान परिस्थितियों में धारा 302 से धारा 304 में दोषसिद्धि के परिवर्तन को उचित ठहराया गया था। इसके अलावा, दोषसिद्धि को 302 से 304 भारतीय दंड संहिता में बदलने के तर्क के समर्थन में सर्वोच्च न्यायालय के कई निर्णयों, जैसे अरविंद शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2017 (3) जेआईसी 787 (एल); कुशा लक्ष्मण वाघमारे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2015) 1 एससीसी (क्रि) 100; आंध्र प्रदेश राज्य बनाम रायवरपु पुन्नय्या, एआईआर 1997 एससी 45; जगूप सिंह बनाम हरियाणा राज्य, एआईआर 1981 एससी 1552; और तुकाराम एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2011) 4 एससीसी 250 पर भरोसा किया गया है।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



इसी तरह के मुद्दे पर इस न्यायालय के राहुल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, Neutral Citation No.- 2023:AHCLKO:69130-DB के निर्णय पर भी भरोसा किया गया है।

14. अंत में, यह तर्क दिया गया है कि चूंकि अभियोजन पक्ष आरोपों को संदेह से परे सिद्ध करने में विफल रहा है, इसलिए अपीलार्थी संदेह के लाभ का हकदार है, जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी को दोषमुक्त किया जाना चाहिए; वैकल्पिक रूप से, दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के तहत कम अपराध में संशोधित किया जाना चाहिए।
15. इसके विपरीत, राज्य की ओर से उपस्थित श्री एस.पी. सिंह, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता (ए.जी.ए.) ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया और अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्कों का विरोध किया। उन्होंने तर्क दिया कि आक्षेपित निर्णय पूरे अभियोजन साक्ष्य के उचित, सावधानीपूर्ण और सूक्ष्म मूल्यांकन को दर्शाता है। यह सबमिट किया गया कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि दर्ज करने से पहले अभियोजन साक्षियों के बयानों, उनके प्रतिपरीक्षण और अभिलेख पर मौजूद विवेचनात्मक सामग्री का सही मूल्यांकन किया। यह आगे सबमिट किया गया कि विचारण न्यायालय ने धारा 313 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अपीलार्थी के बयान और बचाव पक्ष के संस्करण पर उनके सही परिप्रेक्ष्य में विधिवत विचार किया। विद्वान ए.जी.ए. के अनुसार, आक्षेपित निर्णय ठोस और सुसंगत तर्कों पर आधारित है, जिसमें सह-अभियुक्त के साथ मौके पर अपीलार्थी की उपस्थिति निर्णायक रूप से स्थापित होती है, और अपीलार्थी द्वारा मृतक पर जानबूझकर की गई गोलीबारी भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के तत्वों को पूरी तरह संतुष्ट करती है।
16. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि अपीलार्थी का कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के किसी भी अपवाद के अंतर्गत नहीं आता है। यह सबमिट किया गया कि आभूषण और नकदी वाले बैग को छीनने के प्रयास में विफल रहने के बाद, अपीलार्थी द्वारा सार्वजनिक बाजार में दिन-दहाड़े हत्या की गई थी। यह कृत्य जानबूझकर किया गया था, पूर्व-नियोजित था, और आत्मरक्षा या अचानक उकसावे के किसी भी दावे से पूरी तरह असंबद्ध था। यह आगे आग्रह किया गया कि अपीलार्थी एक आदतन अपराधी है जिसका आपराधिक इतिहास रहा है, उसे उत्तर प्रदेश गिरोहबंद और समाज विरोधी क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1986 की धारा 2/3 के तहत मुकदमा अपराध संख्या 426/2008 और यू.पी. गैंगस्टर एक्ट की धारा 2/3 के तहत मुकदमा अपराध संख्या 629/2007 में दोषसिद्ध किया गया है। उसका आपराधिक इतिहास उसकी खतरनाक प्रवृत्ति के संबंध में विचारण न्यायालय के अवलोकन को उचित ठहराता है।
17. विद्वान ए.जी.ए. ने आगे तर्क दिया कि विचारण न्यायालय ने यह भी सही पाया है कि भीड़भाड़ वाले बाजार में एक जौहरी की हत्या ने व्यापारिक समुदाय के बीच भय और असुरक्षा का माहौल पैदा कर दिया है। यह सबमिट किया गया कि ऐसे अपराधी के प्रति कोई भी अनुचित उदारता दिखाना न्याय प्रणाली में जनता के विश्वास को प्रतिकूल रूप से कमजोर करेगा। लगाए गए दंडादेश के संबंध में, यह आग्रह किया गया कि हालांकि विचारण न्यायालय ने मृत्युदंड देने से परहेज किया, लेकिन अपराध की गंभीरता और इसके गहरे सामाजिक प्रभाव को देखते हुए अपीलार्थी को उसके शेष प्राकृतिक जीवन के लिए कारावास की सजा देना सही था। जेल अधीक्षक के दिनांक 05.10.2025 के पत्र पर भी भरोसा किया गया ताकि यह सबमिट किया जा सके कि ऐसे मामलों में छूट का लाभ लागू नहीं होता है।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



18. विद्वान ए.जी.ए. ने शिव कुमार @ शिव @ शिवमूर्ति बनाम कर्नाटक राज्य, (2023) 9 एससीसी 817 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों पर पुरजोर भरोसा किया है; जिसमें शीर्ष न्यायालय ने पुनः पुष्टि की कि संवैधानिक न्यायालय जघन्य अपराधों से जुड़े मामलों में चौदह, तीस या अधिक वर्षों जैसे निश्चित कार्यकाल के लिए आजीवन कारावास की सजा देने के लिए सशक्त हैं, विशेष रूप से वहाँ जहाँ अनुचित उदारता न्याय प्रणाली में जनता के विश्वास को कम करेगी।
19. अंत में, विद्वान ए.जी.ए. ने सबमिट किया है कि विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए दोष के निष्कर्ष ठोस और विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा अच्छी तरह से समर्थित हैं, कि अधिरोपित दंडादेश कानूनी, न्यायसंगत और आनुपातिक है, और इसलिए वर्तमान अपील खारिज किए जाने योग्य है, तथा विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय को पुष्ट और बरकरार रखा जाना चाहिए।

विश्लेषण और निष्कर्ष

20. इस न्यायालय ने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को विस्तार से सुना है और अभिलेख पर मौजूद पूरी सामग्री का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है।
21. एफ.आई.आर. के अनुसार, घटना लगभग शाम 5:30 बजे हुई और उसी दिन यानी 29.02.2008 को शाम लगभग 6:25 बजे एफ.आई.आर. दायर की गई। उक्त एफ.आई.आर. के संस्करण के अनुसार, हत्या का अपराध आग्नेयास्त्रों द्वारा तब किया गया था जब हमलावरों में से एक ने मृतक से आभूषण और नकदी वाला बैग छीनकर डकैती का प्रयास किया और जब मुखबिर मृतक को बचाने गया, तो दूसरे हमलावर ने उस पर भी चाकू से हमला किया, जिससे उसे चोट आई।
22. पी.डब्ल्यू.-1 (नीरज कुमार सोनी), मुखबिर और घायल चश्मदीद गवाह ने अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन करते हुए कहा है कि 29.02.2008 को लगभग शाम 5:30 बजे वह अपनी आभूषण की दुकान पर बैठा था। चूंकि दुकान बंद करने का समय हो गया था, उसका बड़ा भाई-मनोज सोनी अपने बैग में आभूषण और नकदी लेकर घर के लिए निकल रहा था, तभी मोटरसाइकिल सवार दो हमलावरों ने उक्त बैग छीनने का प्रयास किया। वह और उसका बड़ा भाई-मनोज चिल्लाने लगे, जिस पर पड़ोस के व्यक्ति यथा नरेंद्र वर्मा, सुरेश गुप्ता आदि तुरंत पहुँचे और हमलावरों को चुनौती दी। चुनौती दिए जाने पर, एक हमलावर ने मनोज सोनी पर गोली चला दी जिससे उसे घातक चोट आई, जो उसकी पीठ के बाईं ओर लगी, जिसके कारण वह फर्श पर गिर गया। इसके बाद, मुखबिर ने अपने बड़े भाई को बचाने की कोशिश की, हालांकि, दूसरे हमलावर ने उसे भी जान से मारने की नियत से चाकू से हमला किया। मनोज सोनी को तुरंत मोहम्मदी अस्पताल ले जाया गया, जहाँ उसे मृत घोषित कर दिया गया। घटनास्थल पर मौजूद लोगों ने आग्नेयास्त्रों और चाकू के साथ दोनों हमलावरों को पकड़ लिया, जिनमें से एक हमलावर ने अपना नाम सोबरन लाल और दूसरे ने हरि ओम उर्फ बंटू बताया। सोबरन लाल से एक .315 बोर की पिस्तौल और एक खाली कारतूस बरामद किया गया और हरि ओम से एक चाकू और .315 बोर की पिस्तौल तथा बैरल में फंसा एक कारतूस बरामद किया गया। उक्त पी.डब्ल्यू.-1 ने यह भी बताया है कि उसने गौरव पाठक से शिकायत लिखवाई थी और उसे थाने में दर्ज कराया था और घटनास्थल से पुलिस को मोटरसाइकिल बरामद करवाई थी। उक्त साक्षी ने तहरीर को "प्रदर्श-का-1" के रूप में सिद्ध किया है।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



23. पी.डब्ल्यू.-1 (नीरज कुमार सोनी) के मौखिक संस्करण की पुष्टि पी.डब्ल्यू.-2 (पंकज सोनी), पी.डब्ल्यू.-3 (सौर आलम) और पी.डब्ल्यू.-4 (नरेंद्र कुमार वर्मा) द्वारा की गई है, जो पड़ोस के स्वतंत्र दुकानदार हैं और घटना के साक्षी रहे हैं।
24. पी.डब्ल्यू.-5 (डॉ. एस.यू.पी. सिन्हा) ने पी.डब्ल्यू.-1 का चिकित्सीय परीक्षण किया और चोट रिपोर्ट "प्रदर्श-का-5" को सिद्ध किया। उन्होंने अपनी मुख्य परीक्षा में कहा है कि वह 01.03.2008 को प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, मोहम्मदी में तैनात थे और उन्होंने घायल नीरज कुमार सोनी का परीक्षण किया और उनके शरीर पर निम्नलिखित चोटें पाईं:

"(1) बाएँ कंधे के क्षेत्र पर 1 सेमी x 0.4 सेमी x मांस की गहराई तक का घाव, बाएँ एक्रोमियन प्रोसेस से 3 सेमी मध्य में, किनारे साफ कटे हुए, चमकदार पपड़ी मौजूद।

(2) बाएँ हाथ के पिछले हिस्से पर 3 सेमी x 0.5 सेमी x मांस की गहराई तक का घाव, बाएँ कलाई के जोड़ से 6 सेमी नीचे, किनारे साफ कटे हुए, चमकदार पपड़ी मौजूद।

राय: उपरोक्त चोटें (1) और (2) प्रकृति में साधारण हैं और किसी धारदार वस्तु से कारित हुई हैं। अवधि लगभग 12 घंटे से 24 घंटे पुरानी है।"

25. पी.डब्ल्यू.-6 (एस.आई. विजय सिंह) ने पंचनामा को "प्रदर्श-का-2" और घटना के तुरंत बाद तैयार किए गए अन्य समसामयिक पुलिस कागजात को सिद्ध किया है और गवाही दी है कि मनोज सोनी (मृतक) की हत्या 29.02.2008 की शाम लगभग 5:30 बजे हुई थी। एफ.आई.आर. दर्ज होने के बाद, वह एस.एच.ओ.- देवी दयाल सिंह और अन्य पुलिस अधिकारियों के साथ घटनास्थल पर पहुँचे, जहाँ भारी भीड़ थी। देवी दयाल सिंह के निर्देश पर उन्होंने पंचनामा और अन्य पुलिस कागजात तैयार किए।
26. पी.डब्ल्यू.-7 (देवी दयाल सिंह) मामले के विवेचनाधिकारी हैं और उन्होंने गवाही दी है कि पी.डब्ल्यू.-1 (नीरज सोनी) की तहरीर पर अभियुक्त सोबरन लाल और हरि ओम उर्फ बंटू के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 393, 307 के तहत एक मुकदमा दर्ज किया गया था और वह घटनास्थल पर गए और पी.डब्ल्यू.-1 का बयान दर्ज किया तथा मृतक का पंचनामा तैयार करवाया। उन्होंने मुखबिर/पी.डब्ल्यू.-1 की निशानदेही पर नज़री नक्शा बनवाया और अन्य पुलिस दस्तावेज तैयार किए। उन्होंने पंचनामा (प्रदर्श-का-2), नज़री नक्शा (प्रदर्श-का-6), घटनास्थल से खून से सनी और सादी मिट्टी का बरामदगी मेमो (प्रदर्श का-4), आग्नेयास्त्रों .315 बोर पिस्तौल, खोखा कारतूस, जिंदा कारतूस की बरामदगी (प्रदर्श का-3), आरोप पत्र (प्रदर्श-का-7), एक जिंदा कारतूस, एक खाली कारतूस, पिस्तौल और चाकू (प्रदर्श-1 से 6), फोटो, नमूना मुहर, पुलिस फॉर्म 13 और 33, पत्र सीएमओ और आर.आई. (प्रदर्श का-8) और (प्रदर्श का-13), चिक एफ.आई.आर. (प्रदर्श का-14) और जी.डी. (प्रदर्श का-15) को सिद्ध किया।
27. अभियोजन की ओर से प्रस्तुत पी.डब्ल्यू.-8, एच.सी. श्रीराम चौधरी ने गवाही दी है कि दिनांक 29.02.2008 के वाद संख्या 64/2008 की विवेचना उप-निरीक्षक पी.के. श्रीवास्तव द्वारा 01.03.2008 को सौंपी गई थी। इसके बाद, इस साक्षी ने विवेचना अपने हाथ में ली और साक्षियों

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



के बयान दर्ज किए। नज़री नक्शा तैयार किया। साक्षी ने नक्शा प्रदर्श का-16, आरोप पत्र प्रदर्श का-17, प्रदर्श का-18, प्रदर्श का-19 को सिद्ध किया है।

28. अभियोजन की ओर से प्रस्तुत पी.डब्ल्यू.-9, रामायण सिंह ने अपने शपथपूर्ण बयान में चिक एफ.आई.आर. संख्या 64/2008 (प्रदर्श का-20) को अपनी लिखावट और हस्ताक्षर में होने की पुष्टि की है और द्वितीयक साक्षी के रूप में जी.डी. की फोटोकॉपी (प्रदर्श का-21) तथा अभियोजन संस्तुति (प्रदर्श का-22) को भी उक्त साक्षी द्वारा सिद्ध किया गया है।
29. डॉक्टर (पी.डब्ल्यू.-10/ डॉ. आर.आर. अग्निहोत्री) की राय के अनुसार, मृत्यु का अनुमानित समय पोस्टमार्टम परीक्षा आयोजित करने से लगभग आधा दिन पहले का था। पंचायतनामा की कार्यवाही 29.02.2008 को हुई थी और लगभग 18:15 बजे शुरू हुई थी। मृत्यु के कारण का वर्णन करने वाले पंचायतनामा रिपोर्ट के प्रासंगिक कॉलम में यह दर्ज किया गया था कि मृतक की मृत्यु उसे लगी आग्नेयास्त्र की चोट के कारण हुई थी। पंचायतनामा पूरा होने पर, लगभग 18:30 बजे, मृत्यु के सही कारण का पता लगाने के लिए शव को पोस्टमार्टम परीक्षा के लिए भेजा गया था।
30. पी.डब्ल्यू.-10 के रूप में परीक्षित डॉक्टर के अनुसार, पोस्टमार्टम रिपोर्ट उनकी अपनी लिखावट में तैयार की गई थी और उस पर उनके हस्ताक्षर हैं; इसे सिद्ध किया गया और "प्रदर्श-का-23" के रूप में अंकित किया गया। मुख्य परीक्षा में, मृतक को लगी चोटों का वर्णन करते हुए, पी.डब्ल्यू.-10 ने राय दी कि मृत्यु का कारण "मृत्यु पूर्व आग्नेयास्त्र की चोटों के परिणामस्वरूप शॉक और रक्तस्राव" था। अपने प्रतिपरीक्षण में, उन्होंने कहा कि मृत्यु पोस्टमार्टम परीक्षा से लगभग आधा दिन पहले हुई होगी, जो 01.03.2008 की सुबह 6:30 बजे आयोजित की गई थी। उन्होंने यह भी पुष्टि की कि मृतक की मृत्यु पिछली शाम लगभग 5:30 बजे हुई होगी। उन्होंने यह भी कहा कि मृतक के शरीर से बरामद गोली वर्तमान में उनके पास नहीं है। उन्होंने आगे गवाही दी कि एक्स-रे रिपोर्ट में यह लिखने की कोई आवश्यकता नहीं थी कि मृतक का एक्स-रे करने के बाद उसके शरीर में गोली खोजी गई थी, और न ही उस एक्स-रे प्लेट को प्रदर्शित करना आवश्यक था।
31. यह न्यायालय पाता है कि तथ्य के साक्षियों में, पी.डब्ल्यू.-1 (नीरज कुमार सोनी), जो मृतक का सगा भाई है, घटना का चश्मदीद गवाह है। वह एक घायल साक्षी भी है, जिसे उसी घटना में चोटें आई थीं। उसकी चोट की रिपोर्ट प्रदर्श का-5 है और पी.डब्ल्यू.-5 (डॉ. एस.यू.पी. सिन्हा) द्वारा विधिवत सिद्ध की गई है। इसके अलावा, पी.डब्ल्यू.-1 मामले का मुखबिर भी है और उसने स्पष्ट किया है कि उसे लगी चोटों के कारण, उसकी ओर से लिखित शिकायत गौरव पाठक नामक व्यक्ति द्वारा लिखी गई थी। अपने प्रतिपरीक्षण में, उसका बयान सुसंगत और अडिग रहा। हालांकि उस बैग में आभूषण और पैसे के तथ्य के संबंध में संदेह पैदा करने का प्रयास किया गया था जिसे कथित तौर पर दोषसिद्ध व्यक्ति द्वारा मृतक से छीनने का प्रयास किया गया था, लेकिन यह न्यायालय ऐसे संदेह को तात्त्विक नहीं मानता है, क्योंकि अभियोजन पक्ष को डकैती की घटना नहीं, बल्कि डकैती का प्रयास और मृतक-मनोज सोनी की मृत्यु स्थापित करने की आवश्यकता है। किसी भी स्थिति में, पी.डब्ल्यू.-2 (पंकज सोनी) ने अपने प्रतिपरीक्षण में बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट किया है कि वह वही था जिसने घटनास्थल से आभूषण और नकदी वाला बैग उठाया था और घर वापस ले गया था और बाद में, जब विवेचनाधिकारी ने उक्त बैग,

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



आभूषण और नकदी की मांग की, तो उसने उसे प्रस्तुत किया, जिसे बाद में उसे सुपुर्दगी पर छोड़ दिया गया।

32. इसके अलावा, यह न्यायालय उस कानून से बेखबर नहीं हो सकता कि घायल साक्षी का बयान आम तौर पर महत्वपूर्ण साक्ष्य मूल्य रखता है और सामान्यतः उच्च स्तर की विश्वसनीयता का हकदार होता है, जब तक कि बयान में पर्याप्त विसंगतियां या अंतर्विरोध न हों। पी.डब्ल्यू.-1 के बयान को ध्यान से पढ़ने पर, इस न्यायालय को ऐसी कोई तात्त्विक विसंगति नहीं मिलती है। इसलिए, अभियोजन पक्ष के मामले की उत्पत्ति के संबंध में अपीलार्थी द्वारा उठाया गया संदेह पूरी तरह निराधार है। सर्वोच्च न्यायालय ने बालू सुदाम खालदे एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, **2023** एससीसी ऑनलाइन एससी **355** में घायल चश्मदीद गवाह के बयान के साथ किए जाने वाले व्यवहार को निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट रूप से रेखांकित किया है:

"26. जब एक घायल चश्मदीद गवाह के साक्ष्य का मूल्यांकन किया जाना हो, तो न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित निम्नलिखित कानूनी सिद्धांतों को ध्यान में रखना आवश्यक है:

(क) घटना के समय और स्थान पर घायल चश्मदीद गवाह की उपस्थिति पर तब तक संदेह नहीं किया जा सकता जब तक कि उसके बयान में तात्त्विक अंतर्विरोध न हों।

(ख) जब तक साक्ष्य द्वारा अन्यथा स्थापित न हो जाए, यह माना जाना चाहिए कि एक घायल साक्षी वास्तविक दोषियों को भागने नहीं देगा और अभियुक्त को झूठा नहीं फँसाएगा।

(ग) घायल साक्षी के साक्ष्य का साक्ष्य मूल्य अधिक होता है और जब तक बाध्यकारी कारण मौजूद न हों, उनके बयानों को हल्के में खारिज नहीं किया जाना चाहिए।

(घ) स्वभावगत आचरण में कुछ सजावट या मामूली अंतर्विरोधों के कारण घायल साक्षी के साक्ष्य पर संदेह नहीं किया जा सकता।

(ङ) यदि घायल साक्षी के साक्ष्य में कोई अतिशयोक्ति या अतात्त्विक सजावट है, तो ऐसे अंतर्विरोध, अतिशयोक्ति या सजावट को घायल के साक्ष्य से हटा दिया जाना चाहिए, लेकिन पूरे साक्ष्य को नहीं।

(च) अभियोजन पक्ष के संस्करण के व्यापक आधार पर विचार किया जाना चाहिए और समय बीतने के साथ स्मृति लोप के कारण सामान्य रूप से आने वाली विसंगतियों को खारिज कर देना चाहिए।"

33. इसके अलावा, घायल चश्मदीद गवाह के बयान को उच्च पायदान पर रखा जाता है और कानून में एक विशेष दर्जा दिया जाता है क्योंकि चोट स्वयं उपस्थिति और सच्चाई की गारंटी देती है, जैसा

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



कि माननीय शीर्ष न्यायालय ने अब्दुल सईद बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (2010) 10 एससीसी 254 में अभिनिर्धारित किया है; जो निम्नानुसार है:

"इस बिंदु पर कानून को इस आशय के साथ संक्षेपित किया जा सकता है कि घायल साक्षी के बयान को कानून में एक विशेष दर्जा दिया गया है। यह इस तथ्य का परिणाम है कि साक्षी को लगी चोट अपराध के दृश्य पर उसकी उपस्थिति की एक अंतर्निहित गारंटी है और क्योंकि साक्षी अपने वास्तविक हमलावर को केवल किसी तीसरे पक्ष को अपराध के लिए झूठा फँसाने के लिए दंडित किए बिना नहीं छोड़ना चाहेगा। इस प्रकार, घायल साक्षी के बयान पर तब तक भरोसा किया जाना चाहिए जब तक कि उसमें प्रमुख अंतर्विरोधों और विसंगतियों के आधार पर उसके साक्ष्य को खारिज करने के ठोस आधार न हों।"

34. किसी भी स्थिति में, हमें अन्य मौखिक साक्षियों के साथ घायल साक्षी के बयान में कोई ठोस विसंगति या अंतर्विरोध नहीं मिलता है, इसलिए यह न्यायालय अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों से सहमत नहीं है कि घायल साक्षी का बयान विश्वसनीय नहीं होना चाहिए। मामूली विसंगतियां, यदि कोई हों, तो वे स्वाभाविक हैं और अभियोजन पक्ष के मुख्य मामले को प्रभावित नहीं करती हैं। इस प्रकार यह न्यायालय पी.डब्ल्यू.-1 पर संदेह करने का कोई कारण नहीं पाता है।
35. पी.डब्ल्यू.-1 के बयान पर विश्वास न करने और संदेह करने का दूसरा आधार, जैसा कि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा तर्क दिया गया है, यह है कि मृतक पी.डब्ल्यू.-1/मुखबिर का सगा भाई है और वह एक 'हितबद्ध साक्षी' है और विद्वान अधिवक्ता के अनुसार उसके बयान की जांच कुछ सावधानी के साथ की जानी चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मुखबिर/पी.डब्ल्यू.-1 मृतक-मनोज सोनी का सगा भाई है, हालांकि वह एक घायल साक्षी भी है, जिसके बयान को हल्के में खारिज नहीं किया जा सकता है। यह तर्क कि पी.डब्ल्यू.-1 एक "हितबद्ध साक्षी" है, गलत है। इसके अलावा, 'हितबद्ध साक्षी' और 'संबंधित साक्षी' के बीच स्पष्ट अंतर है क्योंकि एक संबंधित साक्षी का अनिवार्य रूप से हितबद्ध साक्षी होना आवश्यक नहीं है। इस पहलू पर कानून माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मो. रोजाली अली बनाम असम राज्य, एआईआर 2019 एससी 1128 में तय किया गया है; जिसमें न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:

"10. जहाँ तक इस तर्क का संबंध है कि सभी चश्मदीद गवाह मृतक के करीबी रिश्तेदार हैं, अब यह भली-भाँति सुस्थापित हो चुका है कि किसी संबंधित साक्षी को केवल पीड़ित का रिश्तेदार होने मात्र से 'हितबद्ध' साक्षी नहीं कहा जा सकता। इस न्यायालय ने कई मामलों में 'हितबद्ध' और 'संबंधित' साक्षियों के बीच के अंतर को स्पष्ट किया है, जिसमें कहा गया है कि किसी साक्षी को केवल तभी हितबद्ध कहा जा सकता है जब वह मुकदमेबाजी के परिणाम से कोई लाभ प्राप्त करता हो, जिसका अर्थ दाण्डिक मामले के संदर्भ में यह होगा कि पूर्व शत्रुता या अन्य कारणों से अभियुक्त को दंडित देखने में साक्षी का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हित है, और इस प्रकार अभियुक्त को झूठा फँसाने का उसका कोई हेतु है (उदाहरण के लिए, देखें राजस्थान राज्य बनाम कल्कि, (1981) 2 एससीसी 752'; अमित बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2012) 4 एससीसी 107'; और गंगाभवानी बनाम रायपति वेंकट रेड्डी, (2013) 15 एससीसी 298')। हाल ही में, इस अंतर को गणपति बनाम तमिलनाडु राज्य, (2018) 5 एससीसी 549' में

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



में, 'राजस्थान राज्य बनाम कल्कि' (उपर्युक्त) में तीन-न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय का संदर्भ देते हुए, निम्नलिखित शब्दों में दोहराया गया था:"

"14. 'संबंधित' का अर्थ 'हितबद्ध' के समान नहीं है। किसी साक्षी को 'हितबद्ध' केवल तभी कहा जा सकता है जब वह मुकदमेबाजी के परिणाम से कोई लाभ प्राप्त करता हो; जैसे किसी सिविल वाद की डिक्री में, या किसी अभियुक्त व्यक्ति को दंडित देखने में। एक साक्षी जो स्वाभाविक है और वाद की परिस्थितियों में एकमात्र संभावित चशमदीद गवाह है, उसे 'हितबद्ध' नहीं कहा जा सकता..."

36. यह समझना आवश्यक है कि आपराधिक मामलों में अक्सर ऐसा होता है कि अपराध का साक्षी पीड़ित का कोई करीबी रिश्तेदार होता है, जिसकी अपराध स्थल पर उपस्थिति स्वाभाविक होती है, जैसा कि वर्तमान मामले में है। मृतक का छोटा भाई और आभूषण की दुकान का सह-स्वामी होने के नाते पी.डब्ल्यू.-1 की उपस्थिति स्वाभाविक है। सुरक्षा कारणों से मृतक के लिए कुछ आभूषण और नकदी अपने घर ले जाना भी स्वाभाविक था क्योंकि दुकान शाम को 5:30-6:00 बजे के बीच बंद हो जाती थी। घटना का समय भी शाम 5:30 बजे है। अभिलेख पर ऐसी कोई असंगति नहीं आई है कि दुकान मृतक या मुखबिर की नहीं थी या दुकान के बंद होने का समय 5:30-6:00 बजे नहीं था या उस दिन दुकान बंद थी या वह आभूषण की दुकान ही नहीं थी। वास्तव में, यह इसके विपरीत है क्योंकि न केवल नज़री नक्शा (प्रदर्श-का-6) सिद्ध किया गया है, बल्कि अन्य चशमदीद गवाहों के बयानों ने, जो पड़ोसी दुकानों के मालिक हैं—अर्थात् पी.डब्ल्यू.-2 (पंकज सोनी), पी.डब्ल्यू.-3 (सौर आलम) और पी.डब्ल्यू.-4 (नरेंद्र कुमार वर्मा)—पी.डब्ल्यू.-1 के बयान की पुष्टि की है। किसी भी स्थिति में, ऐसे साक्षी के साक्ष्य को केवल 'हितबद्ध' का लेबल लगाकर स्वचालित रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है। झूठा फँसाने के लिए पूर्व दुश्मनी या उद्देश्य का कोई साक्ष्य नहीं है। वास्तव में, आपराधिक मामलों में "हितबद्ध साक्षियों" के संबंध में सबसे शुरुआती बयानों में से एक सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दलीप सिंह बनाम पंजाब राज्य, 1954 एससीआर 145 के मामले में दिया गया था; जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अवलोकन किया है:

"26. एक साक्षी को सामान्यतः स्वतंत्र माना जाना चाहिए जब तक कि वह ऐसे स्रोतों से न उपजा हो जिनके दूषित होने की संभावना हो और उसका आमतौर पर मतलब तब तक है जब तक कि साक्षी के पास अभियुक्त के विरुद्ध दुश्मनी जैसा कोई कारण न हो, जिससे वह उसे झूठा फँसाने की इच्छा रखता हो। सामान्यतः, एक करीबी रिश्तेदार वास्तविक अपराधी को बचाने और एक निर्दोष व्यक्ति को झूठा फँसाने वाला अंतिम व्यक्ति होगा..."

37. सुसंगत मौखिक साक्ष्य के आलोक में, जिसकी पुष्टि चिकित्सीय और दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा होती है और उपरोक्त के प्रकाश में तथा उनके बयानों के सूक्ष्म और उद्देश्यपूर्ण पठन पर, यह न्यायालय पाता है कि पी.डब्ल्यू.-1/मुखबिर (नीरज कुमार सोनी), पी.डब्ल्यू.-2 (पंकज सोनी), पी.डब्ल्यू.-3 (सौर आलम) और पी.डब्ल्यू.-4 (नरेंद्र कुमार वर्मा) स्वाभाविक, विश्वसनीय और भरोसेमंद साक्षी हैं और उन्हें हितबद्ध साक्षी नहीं कहा जा सकता, न ही उनके बयानों को केवल रिश्तेदारी के आधार पर खारिज किया जा सकता है।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



38. अपीलार्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया अगला तर्क यह है कि अभियोजन अपीलार्थी की ओर से अपराध के लिए कोई उद्देश्य स्थापित करने में विफल रहा। इस संबंध में पुरजोर तर्क दिया गया है कि चूंकि उद्देश्य का अभाव था, इसलिए घटनाओं की श्रृंखला पूरी नहीं हो सकी और इस तरह अपीलार्थी को संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए था। यह तर्क योग्यताहीन है। सबसे पहले और महत्वपूर्ण बात यह है कि यह समझना होगा कि वर्तमान मामला "प्रत्यक्ष मौखिक साक्ष्य" पर आधारित है न कि "पारिस्थितिक साक्ष्य" पर। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि जहाँ पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित मामलों में उद्देश्य महत्व रख सकता है, वहीं इसका अभाव तब घातक नहीं होता जहाँ अभियोजन ने विश्वसनीय और भरोसेमंद चशमदीद गवाहों का बयान पेश किया हो। उद्देश्य बहुत महत्व रखता है, लेकिन यह कहना कि उद्देश्य की अनुपस्थिति पूरी अभियोजन कहानी को बेदखल कर देगी, इस एक कारक को वह महत्व देना है जो देय नहीं है। उद्देश्य अभियुक्त के मन के क्षेत्र में संचालित होता है और इसे स्थापित करना अक्सर कठिन होता है और शायद ही कभी किसी सटीकता के साथ थाह ली जा सकती है। समय-समय पर न्यायालयों ने अभिनिर्धारित किया है कि उद्देश्य परिस्थितियों की श्रृंखला में एक अतिरिक्त कड़ी की भूमिका निभाता है, हालांकि, वर्तमान में मामला बिल्कुल अलग है क्योंकि यह "चशमदीद गवाह" के वृत्तांत पर आधारित है। उद्देश्य की स्थापना न होने के संबंध में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जब अपराध के संबंध में विश्वसनीय प्रत्यक्ष साक्ष्य हो, तो मकसद होना 'अनिवार्य शर्त' नहीं है। इसलिए, उद्देश्य स्थापित करने में विफलता अभियोजन के मामले को बेदखल नहीं करती है। बिपिन कुमार मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2010) 12 एससीसी 91 के मामले के निर्णय के निम्नलिखित पैराग्राफों को इंगित करना प्रासंगिक है, जो इस न्यायालय की उक्त समझ को अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं:

"19. यह सुस्थापित विधिक प्रस्ताव है कि भले ही कथित रूप से हेतु के अभाव को स्वीकार कर लिया जाए, उसका कोई परिणाम नहीं होता और वह तब महत्वहीन हो जाता है जब प्रत्यक्ष साक्ष्य अपराध को स्थापित करता है। इसलिए, यदि किसी अपराध के किए जाने के संबंध में साक्षियों का प्रत्यक्ष विश्वसनीय साक्ष्य मौजूद है, तो हेतु वाला भाग अपना महत्व खो देता है। अतः, यदि घटना के हेतु की उत्पत्ति सिद्ध नहीं होती है, तो घटना के संबंध में साक्षियों के मौखिक साक्ष्य को केवल हेतु के अभाव के कारण खारिज नहीं किया जा सकता, यदि अन्यथा साक्ष्य विश्वास के योग्य हो। (देखें हरि शंकर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1996) 9 एससीसी 40; बिकाऊ पांडे और अन्य बनाम बिहार राज्य, (2003) 12 एससीसी 616; और अब् ठाकिर और अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य, (2010) 5 एससीसी 91)।"

20. पारिस्थितिक साक्ष्य से संबंधित मामले में, उद्देश्य बहुत महत्व रखता है, लेकिन यह कहना कि उद्देश्य की अनुपस्थिति पूरी अभियोजन कहानी को बेदखल कर देगी, इस एक कारक को वह महत्व देना है जो देय नहीं है। उद्देश्य अभियुक्त के मन में होता है और शायद ही कभी किसी सटीकता के साथ थाह ली जा सकती है। (देखें उजागर सिंह बनाम पंजाब राज्य, (2007) 13 एससीसी 90)।"

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



39. इस प्रकार, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दी गई दलील कि अभियोजन हत्या के अपराध के लिए उद्देश्य स्थापित करने में विफल रहा है, योग्यताहीन है। आपराधिक न्यायशास्त्र का यह एक स्थापित सिद्धांत है कि उद्देश्य हत्या के अपराध का एक आवश्यक तत्व नहीं है, क्योंकि जघन्य अपराध अक्सर तुच्छ या अचानक कारणों से किए जाते हैं। उद्देश्य से संबंधित साक्ष्य, जहाँ उपलब्ध हों, आम तौर पर सहायक प्रकृति के होते हैं। उद्देश्य का केवल होना या न होना, अपने आप में अभियुक्त के दोष को न तो स्थापित कर सकता है और न ही नकार सकता है। जहाँ स्पष्ट, सुसंगत और विश्वसनीय साक्ष्य यह प्रदर्शित करते हैं कि अभियुक्त के पास तत्काल अवसर था और उसने वास्तव में अपराध किया है, वहाँ उद्देश्य के प्रमाण का अभाव अप्रासंगिक हो जाता है। जब स्पष्ट साक्ष्य हो और जहाँ अभियोजन ने संदेह से परे सिद्ध कर दिया हो कि मृतक को अभियुक्त द्वारा दिन-दहाड़े और पूरी सार्वजनिक दृष्टि के सामने मौत के घाट उतार दिया गया था, तो हत्या के आरोप में दोषसिद्धि को बनाए रखने के लिए उद्देश्य का प्रमाण आवश्यक नहीं है। उद्देश्य को सिद्ध करने में विफलता किसी भी तरह से अभियोजन के मामले को कमजोर नहीं करती या दोषसिद्धि को दूषित नहीं करती है।
40. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाया गया अगला आधार एफ.आई.आर. में मोटरसाइकिल संख्या यूपी25यू3803 के उल्लेख और विवेचना के दौरान बाद में मिले इस निष्कर्ष से संबंधित है कि उक्त वाहन अपीलार्थी से संबंधित नहीं था। इस संबंध में, एफ.आई.आर. की कानूनी अवधारणा और दायरे को समझना उचित है। वास्तव में, प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ.आई.आर.) न तो दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में परिभाषित है और न ही इसमें स्पष्ट रूप से उपयोग की गई है, हालांकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 एक संज्ञेय अपराध के किए जाने से संबंधित सूचना को पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी को दिए जाने का उल्लेख करती है। संज्ञेय अपराध की सूचना प्रदान करने के इस प्रारंभिक चरण में, कानून केवल सूचना देने का आदेश देता है। इसमें मुखबिर को अभियुक्त के नाम का खुलासा करने या सभी तथ्यों का विस्तृत विवरण देने की आवश्यकता नहीं होती है। कोई भी व्यक्ति ऐसी सूचना दे सकता है और एफ.आई.आर. को अपराध से संबंधित सभी तथ्यों और विवरणों का सटीक खुलासा करने वाला शब्दकोश होने की आवश्यकता नहीं है।
41. यह अच्छी तरह से स्थापित है कि एफ.आई.आर. में दी गई सूचना हमेशा पुलिस द्वारा सत्यापन के अधीन होती है और यह पुलिस या विवेचनाधिकारी है, जो विवेचना के दौरान उन विवरणों का पता लगाएगा और आवश्यक साक्ष्य एकत्र करेगा, सही तथ्यों का पता लगाएगा और शामिल व्यक्तियों की पहचान करेगा। संक्षेप में, एफ.आई.आर. केवल विवेचना तंत्र को सक्रिय करती है ताकि पुलिस अपराध की विवेचना कर सके और कानून के अनुसार कार्रवाई कर सके।
42. इस पृष्ठभूमि में देखा जाए तो, एफ.आई.आर. में मुखबिर द्वारा दिए गए गलत नंबर का उल्लेख, जो बाद में अभियुक्त से असंबद्ध पाया गया, अर्थहीन है और अपने आप में अभियोजन मामले की सत्यता को प्रभावित नहीं करता है। अधिक से अधिक, ऐसी विसंगति मुखबिर के वृत्तांत की सत्यता पर संदेह पैदा कर सकती है और इसका उपयोग न्यायालय में मुखबिर के साक्ष्य की पुष्टि करने या उसका खंडन करने के लिए किया जा सकता है, लेकिन इसे अन्यथा सुसंगत और विश्वसनीय अभियोजन साक्ष्य को खारिज करने के आधार के रूप में नहीं उठाया जा सकता है।
43. वर्तमान मामले में, यह न्यायालय पाता है कि घटनास्थल पर मोटरसाइकिल होने के तथ्य की पुष्टि पी.डब्ल्यू.-1, पी.डब्ल्यू.-2, पी.डब्ल्यू.-3, पी.डब्ल्यू.-4 और पी.डब्ल्यू.-7 (विवेचनाधिकारी)

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



द्वारा लगातार की गई है। अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि अपराध स्थल पर अपीलार्थी की उपस्थिति और आग्नेयास्त्रों के उपयोग पर विवाद नहीं किया जा सकता है और यह पी.डब्ल्यू.-1, पी.डब्ल्यू.-2, पी.डब्ल्यू.-3 और पी.डब्ल्यू.-4 के सुसंगत और स्पष्ट बयान के माध्यम से मजबूती से स्थापित है, जो सभी घटना के चश्मदीद गवाह हैं। इसके अलावा, पी.डब्ल्यू.-7 ने अपनी गवाही में कहा है कि उन्होंने अपीलार्थी को घटनास्थल से गिरफ्तार किया है और उनकी निशानदेही पर नज़री नक्शा तैयार किया गया है। उन्होंने यह भी कहा है कि अपराध करने में इस्तेमाल की गई एक मोटरसाइकिल घटनास्थल पर बरामद हुई है।

44. इन परिस्थितियों में, घटनास्थल पर अपीलार्थी की मोटरसाइकिल की मौजूदगी के बारे में थोड़ा भी संदेह नहीं है। चाहे मोटरसाइकिल अपीलार्थी की थी, या एफ.आई.आर. में उल्लिखित सटीक पंजीकरण संख्या सही थी, शामिल मुख्य मुद्दे के लिए पूरी तरह से अर्थहीन और अप्रासंगिक है। ऐसी विसंगति किसी भी तरह से अभियोजन के मामले को कमजोर नहीं करती है या अपीलार्थी की दोषसिद्धि को प्रभावित नहीं करती है। एक एफ.आई.आर. से सभी तथ्यों का शब्दकोश होने की उम्मीद नहीं की जाती है। इसका प्राथमिक उद्देश्य आपराधिक विधि को सक्रिय करना है। वाहन के विवरण में कोई भी विसंगति अभियोजन के मामले को प्रभावित नहीं करती है, विशेष रूप से जब घटनास्थल पर आग्नेयास्त्रों के साथ अपीलार्थी की उपस्थिति कई चश्मदीद गवाहों और विवेचनाधिकारी द्वारा सिद्ध हो चुकी है।

45. पंचायतनामा की कार्यवाही में अभियुक्त के रूप में अपीलार्थी के नाम का उल्लेख न होना भी महत्वहीन है, क्योंकि पंचनामा/इन्क्वेस्ट मृतक के शरीर की स्थिति और मृत्यु के स्पष्ट कारण से संबंधित होता है, न कि एफ.आई.आर. दर्ज करने से पहले या बाद के तथ्यों का संग्रह या हमलावर की पहचान निर्धारित करने के लिए। जहाँ तक मृतक द्वारा पहने गए कपड़ों के संबंध में पी.डब्ल्यू.-10, डॉक्टर और विवेचनाधिकारी के बयानों में विसंगति का प्रश्न है, ये समय बीतने या साक्षी की मानसिक स्थिति के कारण स्मृति की सामान्य त्रुटियाँ हैं और अभियोजन पक्ष के मुख्य मामले को प्रभावित नहीं करती हैं। ऐसी मामूली विसंगतियाँ स्वाभाविक हैं और इस न्यायालय द्वारा हाल ही में जितेंद्र पाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, **2025:AHC-LKO:79401-DB** में इन्हें महत्वहीन माना गया है। उक्त मामले में इस न्यायालय को घटना के लंबे समय बाद न्यायालय में दर्ज साक्षियों के बयानों में मामूली विसंगति पर विचार करने का अवसर मिला था। इस न्यायालय ने पैराग्राफ संख्या 17 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:

"17. इसमें कोई संदेह नहीं है कि अभियोजन साक्ष्य में विसंगतियाँ या अंतर्विरोध एक ऐसी कमी हैं जिससे कोई भी आपराधिक वाद मुक्त नहीं है। हालांकि, यह न्यायालय इस तथ्य से बेखबर नहीं हो सकता कि साक्षी के बयान पर विचार करते समय, इस न्यायालय को उस प्रक्रिया को ध्यान में रखना होगा जिसमें तथ्यों को किसी साक्षी द्वारा ग्रहण किया जाता है और गवाही दी जाती है। तमाम निर्णयों की श्रृंखला में समय-समय पर यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब कोई घटना घटती है, तो एक साक्षी अपनी बुद्धि और जीवन के अनुभव के अनुसार तथ्यों को ग्रहण करता है और बाद में जब उसे लंबे अंतराल के बाद उन तथ्यों को याद करने के लिए कहा जाता है, तो उसकी याददाश्त उन तथ्यों को याद करने में उसकी सहायता कर सकती है या बाधा डाल सकती है और वह सटीक समय, स्थान और घटनाओं के क्रम पर लड़खड़ा सकता है। यह मानवीय प्रक्रिया साक्षी के बयान में विसंगति लाती है, जिसे

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



सामान्य कहा जा सकता है। पी.डब्ल्यू.-4 की गवाही, जहाँ तक उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन की शाम 6 बजे मृतक और अपीलार्थी को एक साथ देखे जाने के समय का संबंध है, ऐसी ही एक विसंगति का परिणाम है। हालांकि, जब इस विसंगति को रिकॉर्ड पर आए अन्य साक्ष्यों के साथ तौला और सुव्यवस्थित किया जाता है, तो यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मृतक और अपीलार्थी दोनों को उक्त दुर्भाग्यपूर्ण दिन पर अंतिम बार एक साथ देखा गया था। इसके अलावा, इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि समय में इस तरह की विसंगतियां, विशेष रूप से गाँव में, तथ्यों के अवलोकन की त्रुटियों, समय बीतने के कारण स्मृति की सामान्य त्रुटियों या साक्षी की मानसिक स्थिति के कारण हो सकती हैं। ये विसंगतियां वे हैं जो सामान्य हैं और एक सामान्य व्यक्ति से अपेक्षित हैं और इन्हें ऐसी कोई तात्त्विक विसंगतियां नहीं कहा जा सकता, जो कहानी के मूल आधार को ही प्रभावित कर दें। जब अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा रेखांकित विसंगतियों पर विचार किया जाता है, चाहे वह उस समय से संबंधित हो जब पी.डब्ल्यू.-4 ने अंतिम बार मृतक और अपीलार्थी को मोटरसाइकिल पर एक साथ देखा था या इस साक्षी द्वारा दी गई समय-रेखा से संबंधित हो, इस न्यायालय का मत है कि ये सामान्य हैं न कि तात्त्विक विसंगतियां। अतः, यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि अभियोजन के वाद में विसंगतियां, जहाँ तक घटना की तिथि 09.03.2015 को दिन के दौरान अपीलार्थी की उपस्थिति का संबंध है, महत्वहीन हैं और साक्षियों द्वारा बताए गए तथ्यों पर इनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इस प्रकार, 09.03.2015 को शीतल खेड़ा में अपीलार्थी की उपस्थिति पी.डब्ल्यू.-2, पी.डब्ल्यू.-3 और पी.डब्ल्यू.-4 के साक्ष्यों के संयुक्त पठन से सिद्ध होती है और पी.डब्ल्यू.-4 के 'अंतिम बार एक साथ देखे जाने' के साक्ष्य को भी बचाव पक्ष द्वारा खंडित नहीं किया जा सका, यद्यपि उक्त साक्षी का गहन प्रतिपरीक्षण किया गया था।"

(विशेष बल दिया गया)

46. उपरोक्त के आलोक में, विवेचना के समय मृतक के शरीर पर कपड़ों के संबंध में पी.डब्ल्यू.-10 (डॉक्टर) और विवेचनाधिकारी के बयान में विसंगति सामान्य है और एक सामान्य व्यक्ति द्वारा इसकी पूरी अपेक्षा की जा सकती है, और इसे कोई तात्त्विक विसंगति नहीं कहा जा सकता जिससे अभियोजन का मामला विफल हो जाए।
47. जहाँ तक आभूषण और नकदी वाले बैग की बरामदगी से संबंधित कोई साक्ष्य न होने के संबंध में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है, वह भी समान रूप से विचारणीय नहीं है। पी.डब्ल्यू.-2, जो एक चश्मदीद गवाह भी है, उसने अपने प्रतिपरीक्षण में स्पष्ट रूप से कहा है कि वह घटना के समय घटनास्थल पर मौजूद था और उसने उक्त बैग को जमीन पर पड़ा देखा था और कुछ सामान उसमें बिखरा हुआ था, जिसे उसने इकट्ठा किया और उक्त बैग में डालकर अपने घर में रख लिया। उसने इस बात पर भी व्यापक प्रतिपरीक्षण का सामना किया कि ये तथ्य विवेचनाधिकारी को बताए गए थे और यहाँ तक कि जब उक्त अधिकारी ने उक्त बैग की मांग की, तो वह वही था जिसने विवेचनाधिकारी के समक्ष उक्त बैग प्रस्तुत किया था और बाद में उक्त बैग उसे सुपुर्दगी पर वापस कर दिया गया था। उसने यह भी बताया कि बैग दुकान से लगभग एक या डेढ़ फीट की दूरी पर पड़ा था। प्रतिपरीक्षण में उसका बयान अडिग रहा और कथित विसंगति की पर्याप्त व्याख्या करता है। इस प्रकार, बैग की बरामदगी के संबंध में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाया गया संदेह गलत है और अभिलेख पर आए बयान के आलोक में टिकता नहीं है।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



48. विद्वान अधिवक्ता ने शरीर से बरामद गोली के संबंध में भी संदेह व्यक्त किया है, जिसे कभी न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया, न ही कोई बैलिस्टिक, फॉरेंसिक या वैज्ञानिक साक्ष्य यह सिद्ध करने के लिए प्रस्तुत किया गया कि उक्त गोलियां अपीलार्थी की पिस्तौल से चलाई गई थीं। सबसे पहले, यह समझना होगा कि अभियोजन द्वारा प्रस्तुत वर्तमान मामला चश्मदीद गवाहों के आधार पर है क्योंकि गोली सार्वजनिक रूप से चलाई गई थी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि बैलिस्टिक रिपोर्ट या वैज्ञानिक रिपोर्ट गोली को बंदूक के साथ मिलाने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, विशेष रूप से पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में, हालांकि चश्मदीद गवाह के मामले में इसका महत्व काफी हद तक कम हो जाता है। अभिलेख पर आया है कि अपीलार्थी द्वारा मृतक से बैग छीनते समय गोली चलाई गई थी, जिस पर उसके (मृतक) और पी.डब्ल्यू.-1 द्वारा शोर मचाया गया था और पास की दुकानों के विभिन्न लोग मौके पर पहुँचे थे। इस प्रकार, साक्ष्य में आया है कि न केवल पी.डब्ल्यू.-1 यानी घायल साक्षी, बल्कि पी.डब्ल्यू.-3 (सौर आलम) और पी.डब्ल्यू.-4 (नरेंद्र कुमार वर्मा) ने भी अपीलार्थी द्वारा मृतक को गोली मारने की उक्त घटना देखी है। इसके अलावा, अभिलेख पर आया है कि यह आम जनता ही थी, जिसने अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्त (हरि ओम) को अपराध के हथियार यानी देशी पिस्तौल और चाकू के साथ पकड़ा था। इसलिए, अपीलार्थी द्वारा इस्तेमाल किए गए हथियार से गोलियों को जोड़ने वाली बैलिस्टिक या फॉरेंसिक रिपोर्ट का प्रस्तुत न होना या अनुपस्थिति वर्तमान मामले में घातक नहीं है। अभियोजन का मामला दिन-दहाड़े हुई गोलीबारी के प्रत्यक्ष चश्मदीद वृत्तांत पर आधारित है, जिसकी पुष्टि चिकित्सीय साक्ष्य से होती है। ऐसे मामलों में, बैलिस्टिक साक्ष्य प्रस्तुत न करने से कोई फर्क नहीं पड़ता या अभियोजन की कहानी कमजोर नहीं होती है।
49. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने पुरजोर तर्क दिया है कि अपीलार्थी ने धारा 313 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अपने बयान में कहा है कि उसे तीन दिनों तक अवैध रूप से हिरासत में रखा गया था, जो उनके अनुसार विवेचना की निष्पक्षता पर संदेह पैदा करता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलार्थी ने धारा 313 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अपने बयान में उक्त कथन दर्ज किया है, हालांकि, यह न्यायालय पाता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में उक्त पहलू पर विस्तार से विचार किया है और अभिनिर्धारित किया है कि हालांकि अपीलार्थी को उक्त पहलू को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान किया गया था, लेकिन वे उक्त बिंदु पर कोई साक्ष्य पेश करने में विफल रहे। इस प्रकार, विद्वान विचारण न्यायालय ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114(g) के आलोक में, अपीलार्थी द्वारा यदि कोई हो, तो उक्त साक्ष्य को छिपाने के संबंध में अपीलार्थी के विरुद्ध प्रतिकूल अनुमान सही निकाला है।
50. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने और मामले के अभिलेख का अवलोकन किया गया। जहाँ तक घटना स्थल और घटना कारित होने की रीति का संबंध है, इस न्यायालय को यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि वे अभियोजन साक्षियों के सुसंगत बयानों, अन्य भौतिक परिस्थितियों और रिकॉर्ड पर मौजूद सहायक दस्तावेजी साक्ष्यों से निर्णायक रूप से सिद्ध होते हैं। इसके अलावा, घटनास्थल पर घायल साक्षी (पी.डब्ल्यू.-1) और स्वतंत्र चश्मदीद गवाहों (पी.डब्ल्यू.-3 और पी.डब्ल्यू.-4) की उपस्थिति स्वाभाविक है और उस पर संदेह नहीं किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, पी.डब्ल्यू.-4 ने पंचनामा रिपोर्ट (प्रदर्श-का-2) और देशी पिस्तौल एवं गोलियों के बरामदगी मेमो (प्रदर्श-का-3) को भी सिद्ध किया है। यह सिद्ध होता है कि पुलिस के घटनास्थल पर पहुँचने के बाद, घायल चश्मदीद गवाह (पी.डब्ल्यू.-1) के बोल लिखवाने पर घटना का वर्णन

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



करते हुए लिखित रिपोर्ट (प्रदर्श-का-14) दाखिल की गई है। मृतक मनोज सोनी की उसकी दुकान की दहलीज पर हुई हत्या की घटना पूरी तरह स्थापित है और संदेह से परे सिद्ध है। यह भी सिद्ध होता है कि वर्तमान अपीलार्थी, सोबरन लाल यादव ही अपराध का कर्ता है और मृत्यु, मृतक मनोज सोनी से आभूषण और नकदी का बैग छीनकर डकैती करने के क्रम में कारित की गई थी। पुलिस के मौके पर पहुँचने के बाद पी.डब्ल्यू.-1 के बोल लिखवाने पर लिखित रिपोर्ट तुरंत दर्ज कराई गई थी। अपराध स्थल पर अपीलार्थी की उपस्थिति और घटना में उसकी भूमिका से इनकार नहीं किया गया है, हालांकि उसका वृत्तान्त अलग था। बचाव पक्ष द्वारा दिए गए वे सभी सुझाव कि यह एक दुर्घटना थी, निराधार पाए गए और उन्हें सही रूप से खारिज कर दिया गया। बचाव पक्ष रिकॉर्ड पर कोई ऐसी शत्रुता सिद्ध करने में विफल रहा, जिससे यह पता चले कि इन चश्मदीद गवाहों ने उसके विरुद्ध गवाही क्यों दी होगी। साक्षियों के बयानों का सूक्ष्मता से परिशीलन करने के बाद, इस न्यायालय का मत है कि साक्षियों द्वारा रिकॉर्ड पर लाए गए वाद का मुख्य हिस्सा अप्रभावित रहा। अभियोजन के वाद में मामूली विसंगतियाँ महत्वहीन हैं और साक्षियों द्वारा गवाही में दिए गए तथ्यों पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इस प्रकार, अपीलार्थी की आपराधिक जवाबदेही संदेह से परे सिद्ध होती है।

51. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया अगला तर्क एक वैकल्पिक तर्क की प्रकृति का है, जिसमें उन्होंने यह पुष्ट करने का प्रयास किया है कि भले ही अभियोजन के वाद को सच मान लिया जाए, घटना अचानक स्थिति में हुई थी, और अधिक से अधिक, भीड़ जमा होने के कारण डर के मारे एक ही गोली चलाई गई थी और चूंकि उनके अनुसार पूर्वचिंतन का कोई साक्ष्य नहीं है, इसलिए वर्तमान वाद, अपने उच्चतम स्तर पर, भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग I या II के अंतर्गत आएगा। इस तर्क के समर्थन में कि कृत्य अचानक स्थिति में और जान से मारने के आशय के बिना हुआ था, अतुल ठाकुर बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, (2018) 2 एससीसी 496 में प्रतिवेदित; अरविंद शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2017 (3) जेआईसी 787 एल में प्रतिवेदित; कुशा लक्ष्मण वाघमारे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2015) 1 एससीसी (क्रि) 100 में प्रतिवेदित; आंध्र प्रदेश राज्य बनाम रायवरपु पुन्नय्या, एआईआर 1997 एससी 45 में प्रतिवेदित; जगूप सिंह बनाम हरियाणा राज्य, एआईआर 1981 एससी 1552 में प्रतिवेदित; और तुकाराम एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2011) 4 एससीसी 250 में प्रतिवेदित निर्णयों पर भरोसा किया गया है। इसी तरह के मुद्दे पर इस न्यायालय के वाद, राहुल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, *Neutral Citation No.- 2023:AHC-LKO;69130-DB* में प्रतिवेदित निर्णय पर भी भरोसा किया गया है।

52. इससे पहले कि यह न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धारा 302 या धारा 304 के तहत अपीलार्थी की आपराधिक जवाबदेही निर्धारित करने के लिए उपर्युक्त प्रस्ताव पर विचार करे, एक ओर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के प्रावधानों और दूसरी ओर धारा 304 भाग I और भाग II के तहत 'हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध' के बीच के अंतर को नियंत्रित करने वाले कानूनी सिद्धांतों पर एक त्वरित नज़र डालना उचित होगा।

53. भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और 300, जो क्रमशः आपराधिक मानव वध और हत्या की परिभाषा से संबंधित हैं, अन्य बातों के साथ-साथ उल्लेख करती हैं:

299. आपराधिक मानव वध।”

“अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



जो कोई मृत्यु कारित करने के आशय से, या ऐसी शारीरिक चोट कारित करने के आशय से जिससे मृत्यु होना संभाव्य हो, या यह ज्ञान रखते हुए कि यह संभाव्य है कि वह उस कार्य से मृत्यु कारित कर देगा, कोई कार्य करके मृत्यु कारित करता है, वह आपराधिक मानव वध का अपराध करता है।

300. हत्या।”

इसमें इसके पश्चात अपवर्जित मामलों को छोड़कर, आपराधिक मानव वध हत्या है, यदि वह कार्य जिसके द्वारा मृत्यु कारित की गई है, मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया हो, या—

(दूसरा)” यदि वह ऐसी शारीरिक चोट कारित करने के आशय से किया गया हो जिसे अपराधी जानता हो कि उस व्यक्ति की मृत्यु कारित करना संभाव्य है जिसे क्षति पहुँचाई गई है, या

(तीसरा)” यदि वह किसी व्यक्ति को शारीरिक चोट कारित करने के आशय से किया गया हो और वह शारीरिक चोट जिसका कारित किया जाना आशयित हो, प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो, या

(चौथा)” यदि कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि वह कार्य इतना आसन्न संकटपूर्ण है कि पूरी संभावना है कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शारीरिक चोट कारित करेगा जिससे मृत्यु होना संभाव्य है, और वह मृत्यु कारित करने या वैसी चोट कारित करने के जोखिम को उठाने के लिए किसी प्रतिउद्देश्य के बिना ऐसा कार्य करता है।

दृष्टांत

(क) 'क', 'य' को मार डालने के आशय से उस पर गोली चलाता है। परिणामस्वरूप 'य' मर जाता है। 'क' हत्या करता है।

(ख) 'क', यह जानते हुए कि 'य' ऐसे रोग से ग्रस्त है कि एक प्रहार से उसकी मृत्यु होना संभाव्य है, शारीरिक चोट कारित करने के आशय से उस पर प्रहार करता है। प्रहार के परिणामस्वरूप 'य' मर जाता है। 'क' हत्या का दोषी है, यद्यपि वह प्रहार प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में एक स्वस्थ व्यक्ति की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त न रहा हो। किंतु यदि 'क', यह न जानते हुए कि 'य' किसी रोग से ग्रस्त है, उस पर ऐसा प्रहार करता है जिससे प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में एक स्वस्थ व्यक्ति की मृत्यु न होती, तो यहाँ 'क', यद्यपि उसका आशय शारीरिक चोट कारित करने का रहा हो, हत्या का दोषी नहीं है, यदि उसका आशय मृत्यु कारित करने का या ऐसी शारीरिक चोट कारित करने का नहीं था जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित कर देती।

(ग) 'क' जानबूझकर 'य' को तलवार का घाव या लाठी की चोट देता है जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में एक मनुष्य की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है। परिणामस्वरूप 'य' मर जाता है। यहाँ 'क' हत्या का दोषी है, यद्यपि उसका आशय 'य' की मृत्यु कारित करने का न रहा हो।

(घ) 'क' किसी प्रतिउद्देश्य के बिना व्यक्तियों की भीड़ पर भरी हुई तोप चलाता है और उनमें से एक को मार डालता है। 'क' हत्या का दोषी है, यद्यपि उसकी किसी विशिष्ट व्यक्ति को मारने की पूर्वचिंतित योजना न रही हो।

अपवाद 1. “कब आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है। “अपराधिक मानव वध हत्या नहीं है यदि अपराधी, गंभीर और अचानक उकसावे के कारण आत्म-नियंत्रण की शक्ति से वंचित होकर उस व्यक्ति की मृत्यु

“अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



कारित करता है जिसने उकसावा दिया था या भूल या दुर्घटना से किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु कारित करता है। उपरोक्त अपवाद निम्नलिखित परंतुक के अधीन हैं:

(प्रथम) यह कि उकसावा अपराधी द्वारा किसी व्यक्ति को मारने या क्षति पहुँचाने के बहाने के रूप में स्वयं नहीं चाहा गया हो या स्वेच्छा से उत्तेजित न किया गया हो।

(द्वितीय) यह कि उकसावा विधि के पालन में किए गए किसी कार्य द्वारा, या किसी लोक सेवक द्वारा ऐसे लोक सेवक की शक्तियों के विधिपूर्ण प्रयोग में न दिया गया हो।

(तृतीय) यह कि उकसावा निजी प्रतिरक्षा के अधिकार के विधिपूर्ण प्रयोग में किए गए किसी कार्य द्वारा न दिया गया हो।

स्पष्टीकरण। उकसावा इतना गंभीर और अचानक था या नहीं कि वह अपराध को हत्या की कोटि में आने से रोक सके, यह तथ्य का प्रश्न है।

दृष्टांत

(क) 'क', 'य' द्वारा दिए गए उकसावे से उत्तेजित आवेश के प्रभाव में आकर 'य' के बच्चे 'च' की जानबूझकर हत्या कर देता है। यह हत्या है, क्योंकि उकसावा बच्चे द्वारा नहीं दिया गया था, और उकसावे के कारण किए गए कार्य में बच्चे की मृत्यु दुर्घटना या दुर्भाग्य से नहीं हुई थी।

(ख) 'य', 'क' को गंभीर और अचानक उकसावा देता है। 'क' इस उकसावे पर 'य' पर पिस्तौल चलाता है, उसका न तो 'ज' को मारने का आशय है और न ही वह यह जानता है कि उसके द्वारा 'ज' के मारे जाने की संभावना है, जो उसके पास है किंतु दृष्टि से ओझल है। 'क', 'ज' को मार डालता है। यहाँ 'क' ने हत्या नहीं की है, बल्कि केवल आपराधिक मानव वध किया है।

(ग) 'क' को एक बेलीफ 'य' द्वारा विधिपूर्वक गिरफ्तार किया जाता है। 'क' गिरफ्तारी के कारण अचानक और हिंसक आवेश में आ जाता है और 'य' को मार डालता है। यह हत्या है, क्योंकि उकसावा एक लोक सेवक द्वारा अपनी शक्तियों के प्रयोग में किए गए कार्य द्वारा दिया गया था।

(घ) 'क' एक मजिस्ट्रेट 'य' के समक्ष साक्षी के रूप में उपस्थित होता है। 'य' कहता है कि वह 'क' के बयान के एक शब्द पर भी विश्वास नहीं करता और 'क' ने झूठी गवाही दी है। 'क' इन शब्दों से अचानक आवेश में आ जाता है और 'य' को मार डालता है। यह हत्या है।

(ङ) 'क', 'य' की नाक खींचने का प्रयास करता है। 'य' निजी प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में 'क' को ऐसा करने से रोकने के लिए पकड़ लेता है। 'क' इसके परिणामस्वरूप अचानक और हिंसक आवेश में आ जाता है और 'य' को मार डालता है। यह हत्या है, क्योंकि उकसावा निजी प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में किए गए कार्य द्वारा दिया गया था।

(च) 'ज', 'ब' पर प्रहार करता है। 'ब' इस उकसावे से हिंसक आवेश में आ जाता है। 'अ', एक राहगीर, 'ब' के आवेश का लाभ उठाने के इरादे से और उसे 'ज' की हत्या करने के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से, 'ब' के हाथ में एक चाकू दे देता है। 'ब' चाकू से 'ज' की हत्या कर देता है। यहाँ 'ब' ने केवल आपराधिक मानव वध किया होगा, लेकिन 'अ' हत्या का दोषी है।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



अपवाद 2. “आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है यदि अपराधी, शरीर या संपत्ति की निजी प्रतिरक्षा के अधिकार का सद्भावपूर्वक प्रयोग करते हुए, विधि द्वारा उसे दी गई शक्ति से आगे बढ़ जाता है और उस व्यक्ति की मृत्यु कारित कर देता है जिसके विरुद्ध वह रक्षा के ऐसे अधिकार का प्रयोग कर रहा है, बिना किसी पूर्वचिंतन के, और रक्षा के उद्देश्य के लिए आवश्यक से अधिक क्षति पहुँचाने के किसी आशय के बिना।

दृष्टांत

‘ज’, ‘अ’ को चाबुक से मारने का प्रयास करता है, लेकिन इस तरह से नहीं कि ‘अ’ को घोर उपहति हो। ‘अ’ पिस्तौल निकाल लेता है। ‘ज’ हमला जारी रखता है। ‘अ’ सद्भावपूर्वक यह विश्वास करते हुए कि वह चाबुक से पीटे जाने से खुद को किसी अन्य माध्यम से नहीं बचा सकता, ‘ज’ को गोली मार देता है। ‘अ’ ने हत्या नहीं की है, बल्कि केवल आपराधिक मानव वध किया है।

अपवाद 3. आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है यदि अपराधी, एक लोक सेवक होने के नाते या लोक न्याय की उन्नति के लिए कार्य करने वाले लोक सेवक की सहायता करते हुए, विधि द्वारा उसे दी गई शक्तियों से आगे बढ़ जाता है, और ऐसा कार्य करके मृत्यु कारित करता है जिसे वह सद्भावपूर्वक अपने कर्तव्य के उचित निर्वहन के लिए वैध और आवश्यक मानता है और उस व्यक्ति के प्रति बिना किसी दुर्भावना के जिसकी मृत्यु कारित की गई है।

अपवाद 4. आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है यदि वह बिना पूर्वचिंतन के, अचानक झगड़े में आवेश की गर्मी में और अपराधी द्वारा अनुचित लाभ उठाए बिना या क्रूर या असामान्य तरीके से कार्य किए बिना किया गया हो।

स्पष्टीकरण। ऐसे मामलों में यह महत्वहीन है कि कौन सा पक्ष उकसावा देता है या पहला हमला करता है।

अपवाद 5. आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है जब वह व्यक्ति जिसकी मृत्यु कारित की गई है, अठारह वर्ष से अधिक आयु का होने पर, अपनी सहमति से मृत्यु सहता है या मृत्यु का जोखिम उठाता है।

दृष्टांत

‘अ’, उकसावे द्वारा, अठारह वर्ष से कम आयु के व्यक्ति ‘ज’ को आत्महत्या करने के लिए स्वेच्छा से प्रेरित करता है। यहाँ, ‘ज’ की कम उम्र के कारण, वह अपनी मृत्यु के लिए सहमति देने में असमर्थ था; इसलिए ‘अ’ ने हत्या के लिए दुष्प्रेरित किया है।

54. अतः, धारा 299 के निबंधनों में, ‘अपराधिक मानव वध’ को मृत्यु कारित करने के ऐसे कार्य के रूप में वर्णित किया गया है: - (i) मृत्यु कारित करने के आशय से, या (ii) ऐसी शारीरिक चोट कारित करने के आशय से जिससे मृत्यु होना संभाव्य हो, या (iii) इस ज्ञान के साथ कि ऐसे कार्य से मृत्यु होना संभाव्य है। आशय और ज्ञान की अवधारणाएँ सुस्पष्ट मानसिक स्थितियों को दर्शाती हैं। जैसा कि इस प्रावधान के पठन से स्पष्ट है, इसका प्रथम भाग “आशय” की अभिव्यक्ति पर बल देता है जबकि बाद वाला भाग “ज्ञान” पर। सरल शब्दों में, “आशय” किसी कार्य के पीछे के प्रयोजन (संकल्प) को दर्शाता है, जबकि “ज्ञान” कार्य के संभावित प्रभाव के प्रति जागरूकता (संज्ञान) को सूचित करता है। सरल रूप में कहें तो, आशय सोद्देश्य संकल्प से संबंधित है, जबकि ज्ञान संभावित परिणामों के प्रति जागरूकता को संदर्भित करता है। हाल ही में, “अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा

सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



माननीय उच्चतम न्यायालय ने 'नंद कुमार @ नंदू मणिलाल मुदलियार बनाम गुजरात राज्य', जो 2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 2374 में प्रतिवेदित है; में दण्डिक विधि में "आशय" और "ज्ञान" के बीच सूक्ष्म अंतर को स्पष्ट करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि "आशय" में व्यक्ति मृत्यु कारित करना चाहता था, जबकि "ज्ञान" का अर्थ है कि व्यक्ति इस बात से अवगत था कि उसके कार्य से मृत्यु होना संभाव्य है, भले ही उसने इसकी इच्छा न की हो।

55. जैसा कि विभिन्न नजीरों में उल्लेख किया गया है, ये दोनों शब्द अलग-अलग श्रेणियों के सकारात्मक मानसिक दृष्टिकोण को दर्शाते हैं। एक बार जब धारा 299 के तहत परिकल्पित आशय या ज्ञान के साथ ऊपर बताए गए तीन तरीकों में से किसी भी तरीके से मृत्यु कारित हो जाती है, तो अपराध "आपराधिक मानव वध" की कोटि में आता है।

56. हालांकि, धारा 300 "हत्या" से संबंधित है। यद्यपि संहिता की धारा 300 में "हत्या" की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं है, लेकिन जैसा कि शीर्ष न्यायालय द्वारा रामपाल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2012) 8 एससीसी 289 में अभिनिर्धारित और दोहराया गया है; "आपराधिक मानव वध" 'जीनस' है और "हत्या" उसकी 'प्रजाति' है और सभी "हत्याएं" "आपराधिक मानव वध" हैं लेकिन सभी "आपराधिक मानव वध" "हत्या" नहीं हैं।

57. एक मामले पर विचार करते हुए, जहाँ विचारार्थ प्रश्न यह था कि अभियोजन द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध स्थापित अपराध "हत्या" था या "हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध", शीर्ष न्यायालय ने विनीत कुमार चौहान बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2007) 14 एससीसी 660 में अपने विभिन्न पूर्व निर्णयों पर विचार करने के बाद अभिनिर्धारित किया कि जब भी किसी न्यायालय के सामने यह प्रश्न आता है कि अपराध "हत्या" (आईपीसी की धारा 302 के तहत दंडनीय) है या "हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध" (आईपीसी की धारा 304 भाग I या भाग II के तहत दंडनीय), तो उसके लिए समस्या को तीन चरणों में देखना सुविधाजनक होगा:

(i) पहले चरण में विचार किया जाने वाला प्रश्न यह होगा कि क्या अभियुक्त ने कोई ऐसा कार्य किया है जिससे उसने दूसरे की मृत्यु कारित की है;

(ii) अभियुक्त के कार्य और मृत्यु के बीच ऐसे संबंध का प्रमाण दूसरे चरण की ओर ले जाता है जहाँ यह विचार किया जाता है कि क्या अभियुक्त का वह कार्य धारा 299 में परिभाषित "आपराधिक मानव वध" की कोटि में आता है। यदि इस प्रश्न का उत्तर प्रथम दृष्टया सकारात्मक पाया जाता है, तो आईपीसी की धारा 300 के संचालन पर विचार करने का चरण आता है;

(iii) तीसरा चरण यह निर्धारित करना है कि क्या अभियोजन द्वारा सिद्ध किए गए तथ्य मामले को धारा 300 में निहित "हत्या" की परिभाषा के चार खंडों में से किसी के दायरे में लाते हैं। यदि उत्तर नकारात्मक है, तो अपराध "हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध" होगा, जो धारा 304 के पहले या दूसरे भाग के तहत दंडनीय होगा, जो इस बात पर निर्भर करता है कि क्रमशः धारा 299 का दूसरा या तीसरा खंड लागू होता है या नहीं।

58. इसके अतिरिक्त, यदि इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक मिलता है, किंतु मामला धारा 300 में वर्णित किसी भी अपवाद के अंतर्गत आता है, तो अपराध अभी भी "हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध" होगा, जो भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के पहले भाग के तहत "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा

सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



दंडनीय होगा। हालांकि, उसमें यह स्पष्ट किया गया था कि ये केवल न्यायालय के कार्य को सुगम बनाने के लिए व्यापक दिशानिर्देश थे, न कि कोई कठोर अपरिवर्तनीय नियम।

59. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित उपर्युक्त निर्णय और उसके द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत के मार्गदर्शन में, वर्तमान मामले के तथ्यों में, पहला कदम यह जांचना होगा कि क्या अपीलार्थी ने संहिता की धारा 300 के मूल प्रावधानों के तहत दंडनीय अपराध किया है, यानी "हत्या"।
60. यह पता लगाने के मार्ग पर चलते हुए कि क्या अपीलार्थी का वह कृत्य जिससे मृतक की मृत्यु हुई, भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के चार खंडों में से किसी में आएगा, यह ध्यान दिया जा सकता है कि स्वीकार्य रूप से दोनों अभियुक्त व्यक्ति मृतक से आभूषण और नकदी वाले बैग की डकैती करने के इरादे से आए थे। घटना का समय काफी महत्वपूर्ण है, क्योंकि स्पष्ट रूप से ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों हमलावर मृतक मनोज सोनी की दिनचर्या से अवगत थे, विशेष रूप से उस समय से जब वह दुकान बंद करने के बाद अपने घर ले जाने के लिए बैग में आभूषण और नकदी इकट्ठा करता था। इसलिए, डकैती को अंजाम देने के लिए समय का चयन महत्वपूर्ण है और पूर्व योजना की ओर संकेत करता है।
61. घायल चश्मदीद गवाह पी.डब्ल्यू.-1 का स्पष्ट बयान, जिसकी पुष्टि अन्य चश्मदीद गवाहों (पी.डब्ल्यू.-3 और पी.डब्ल्यू.-4) द्वारा की गई है, यह स्थापित करता है कि अपीलार्थी और सह-अभियुक्त दोनों ने मृतक से आभूषण और नकदी वाला बैग छीनने का प्रयास किया। उसके विरोध करने और चिल्लाने पर, जिससे पी.डब्ल्यू.-1 अन्य साक्षियों (पी.डब्ल्यू.-2, पी.डब्ल्यू.-3 और पी.डब्ल्यू.-4) के साथ मौके पर पहुँचा, अपीलार्थी ने .315 बोर की एक देशी पिस्तौल निकाली और मृतक पर गोली चला दी, जिससे उसे घातक चोट आई। दिलचस्प बात यह है कि सह-अभियुक्त भी एक भरी हुई .315 बोर की देशी पिस्तौल से लैस था; हालांकि, उसने अपने आग्नेयास्त्र का प्रयोग नहीं किया और केवल पी.डब्ल्यू.-1 पर चाकू से हमला किया, जिससे चोटें आईं लेकिन मृत्यु नहीं हुई।
62. आग्नेयास्त्र ले जाने का कृत्य और उसके उपयोग का तरीका, स्पष्ट रूप से अपीलार्थी के हत्या करने के "आशय" को दर्शाता है। मृतक पर गोली चलाने का कृत्य स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है कि उक्त पिस्तौल उसके द्वारा डकैती करने के लिए केवल डराने या शारीरिक चोट की धमकी देने के लिए नहीं ली गई थी, बल्कि ऐसी शारीरिक चोट कारित करने के लिए ली गई थी जिसका परिणाम मृत्यु होना संभाव्य था। इस तथ्य को दूसरे नजरिए से भी समझा जा सकता है, क्योंकि सह-अभियुक्त (हरि ओम) भी .315 बोर की देशी पिस्तौल ले जा रहा था, लेकिन पी.डब्ल्यू.-1 द्वारा किसी तरह के डर/आवेश में डाले जाने के बावजूद उसने गोली नहीं चलाई बल्कि पी.डब्ल्यू.-1 पर चाकू से हमला किया। अतः यह तर्क कि बंदूक केवल डराने के लिए ले जाई गई थी और बिना किसी पूर्वचिंतित मन के चलाई गई थी, एक भ्रांति है और पूरी तरह से निराधार है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों के समग्र मूल्यांकन पर, इस न्यायालय के मन में यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि अपीलार्थी ने मृतक की हत्या करने के पूर्वचिंतित आशय से कार्य किया। यह निष्कर्ष अभियोजन के विभिन्न साक्षियों के सुसंगत और विश्वसनीय बयानों द्वारा मजबूती से समर्थित है।
63. पी.डब्ल्यू.-1 के प्रतिपरीक्षण के दौरान अपीलार्थी द्वारा पूछे गए विभिन्न सुझावात्मक प्रश्नों के अनुसार, हालांकि उक्त साक्षी ने उनसे इनकार किया था, एक वैकल्पिक वृत्तांत प्रस्तुत करने का

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



प्रयास किया गया था कि सह-अभियुक्त (हरि ओम) को कुछ पैसों की आवश्यकता थी और मृतक मनोज सोनी ने कुछ आभूषणों के बदले उसे कुछ पैसे उधार दिए थे। यह सुझाव दिया गया कि हालांकि उक्त हरि ओम ने पूरे पैसे चुका दिए थे, लेकिन मृतक मनोज सोनी ने गिरवी रखे आभूषण वापस नहीं किए। यह सुझाव दिया गया कि अपीलार्थी सहित दोनों अभियुक्त वास्तव में मृतक की दुकान पर केवल उक्त आभूषण वापस करने का अनुरोध करने गए थे।

64. सबसे पहले और महत्वपूर्ण बात यह है कि पी.डब्ल्यू.-1 ने उक्त सुझाव को नकार दिया है। अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि अपीलार्थी ने उक्त वृत्तांत को सिद्ध करने के लिए कोई बचाव साक्ष्य पेश नहीं किया, जिसके परिणामस्वरूप भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114(g) के तहत अपीलार्थी के विरुद्ध प्रतिकूल अनुमान निकाला गया। इसके अलावा, अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत यह वृत्तांत उसके मामले में सहायता करने के बजाय अभियोजन पक्ष के संस्करण को पुष्ट करता है और अपीलार्थी की मानसिक स्थिति निर्धारित करने में सहायक होता है। यह न्यायालय इस बात पर अचंभित है कि कोई व्यक्ति जब आभूषण वापस करने का अनुरोध करने जाएगा, तो वह दो व्यक्तियों के साथ और उससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि दो पिस्तौल और जिंदा कारतूस लेकर क्यों जाएगा। इसके ऊपर, यदि हम यह रियायत भी दे दें कि पिस्तौल मृतक को धमकाने के लिए ले जाई गई थी, तो तार्किक रूप से वह हरि ओम द्वारा ले जाई जानी चाहिए थी, जो अपीलार्थी के अपने वृत्तांत के अनुसार प्रभावित पक्ष था, न कि वर्तमान अपीलार्थी द्वारा।
65. उक्त निष्कर्ष हरि ओम के आचरण से और पुष्ट होता है, जिसने बरामदगी मेमो (प्रदर्श का-3) के अनुसार भरी हुई पिस्तौल होने के बावजूद उसे नहीं चलाया और इसके बजाय घायल साक्षी पी.डब्ल्यू.-1 पर चाकू से हमला किया। इसके विपरीत, अपीलार्थी न केवल पिस्तौल ले गया बल्कि मृतक पर गोली भी चलाई जिससे उसकी मृत्यु हो गई। मामले के तथ्य स्पष्ट रूप से स्थापित और सिद्ध करते हैं कि यह कृत्य न तो अचानक उकसावे का परिणाम था और न ही अचानक लड़ाई का, विशेष रूप से अपीलार्थी या सह-अभियुक्त को आई चोटों का कोई साक्ष्य न होने की स्थिति में। परिणामस्वरूप, बचाव पक्ष का वृत्तांत पूरी तरह से अविश्वसनीय हो जाता है और इसके विपरीत इस निष्कर्ष को और बल देता है कि अपीलार्थी ने जानबूझकर, घातक और दोषपूर्ण आशय के साथ कार्य किया।
66. चशमदीद गवाहों के बयान इस आशय से सुसंगत हैं कि जब मृतक ने डकैती का विरोध करने की कोशिश की, तो अपीलार्थी द्वारा पीछे से बाएँ कंधे के पास गोली मारी गई जिससे उसकी मृत्यु हो गई। यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि जिस प्रकार का हथियार (पिस्तौल) ले जाया गया था, शरीर का वह स्थान जहाँ मृतक को गोली मारी गई थी, और उसकी स्थिति यानी पीछे का हिस्सा, जिसका अर्थ है कि मृतक पिस्तौल देखकर भागने लगा होगा (चूंकि उसे पीछे से गोली मारी गई थी), ये सभी बिंदु प्रबल संकेत देते हैं कि मृत्यु अपीलार्थी द्वारा पूर्वचिंतित मन से कारित की गई थी, जो मृतक की मृत्यु कारित करने की तैयारी के साथ आया था। मृतक द्वारा कोई उकसावा नहीं दिया गया था क्योंकि वह केवल डकैती का विरोध कर रहा था और पिस्तौल दिखाने पर खुद को बचाने के लिए भागने लगा था। इसके अलावा, हथियार की प्रकृति, लक्षित शरीर का अंग और यह तथ्य कि मृतक को भागने के प्रयास के दौरान गोली मारी गई थी, अचानक लड़ाई, उकसावे या निजी प्रतिरक्षा के अधिकार की किसी भी दलील को पूरी तरह नकारते हैं। ये परिस्थितियाँ स्पष्ट रूप से पूर्वचिंतन की ओर इशारा करती हैं।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



67. उपरोक्त परिस्थितियों में, मृतक की मृत्यु कारित करने वाला अपीलार्थी का 'आपराधिक मानव वध' का कृत्य "हत्या" की परिभाषा, दृष्टांत (क) के अंतर्गत आता है, जो कहता है, "'क', 'य' को मार डालने के आशय से उस पर गोली चलाता है। परिणामस्वरूप 'य' मर जाता है। 'क' हत्या करता है"। यहाँ, 'क' अपीलार्थी है और 'य' मृतक मनोज सोनी है।
68. इस प्रकार, यह न्यायालय पहले प्रश्न के उत्तर पर पहुँचता है कि अपीलार्थी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अर्थ के भीतर अपराध किया है, अर्थात् "हत्या की कोटि में आने वाला आपराधिक मानव वध", जो संहिता की धारा 302 के तहत दंडनीय है। डकैती का अपराध करते समय पिस्तौल रखना और उसके बाद गोली चलाना, पूर्वचिंतित मन से किया गया कार्य था।
69. उपरोक्त चर्चा के आलोक में, हम अपीलार्थी की विद्वान अधिवक्ता के इन तर्कों से सहमत नहीं हैं कि अपीलार्थी द्वारा किया गया अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के पहले या दूसरे भाग के अंतर्गत आएगा न कि धारा 302 के तहत। अपीलार्थी को धारा 302 के तहत अपराध का दोषी ठहराते हुए, हम विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय के अनुसार दोषसिद्धि को बरकरार रखते हैं। हालांकि, अगला प्रश्न यह उठता है कि क्या यह न्यायालय अपीलार्थी के दंडादेश को कम कर सकता है और यदि हाँ, तो किस सीमा तक, जैसा कि 17 वर्षों से अधिक के कारावास की अवधि और अभिलेख पर लाए गए साक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए उदारता की प्रार्थना की गई है।
70. इस पहलू में, इस न्यायालय को हाल ही में ऐसी ही स्थिति से निपटने का अवसर मिला था, हालांकि वह पारस नाथ साहू एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, **2025:AHC-LKO:83391-DB** के मामले में धारा 304-बी के तहत अपराध के लिए था; जहाँ उस मामले में अपीलार्थी को आजीवन कारावास की सजा दी गई थी। इस विषय पर कानून की चर्चा करते हुए इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:

42. माननीय उच्चतम न्यायालय की संवैधानिक पीठ, भारत संघ बनाम वी. श्रीहरन, जो (2016) 7 एससीसी 1 में प्रतिवेदित है, के वाद में इस मुद्दे पर विचार कर रही थी कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 53 सहपठित धारा 45 के निबंधनों में आजीवन कारावास का अर्थ दोषसिद्ध के शेष जीवन के लिए कारावास है। संवैधानिक पीठ ने स्वामी श्रद्धानंद (2) बनाम कर्नाटक राज्य, जो (2008) 13 एससीसी 767 में प्रतिवेदित है, सहित विभिन्न नजीरों का संदर्भ देने के बाद, वी. श्रीहरन (उपर्युक्त) निर्णय के पैराग्राफ संख्या 104 और 105 में इसका उत्तर दिया है, जिसे नीचे शब्दशः उद्धृत किया गया है:

"104. उसके अतिरिक्त, ऐसे अधिकांश मामलों में जहाँ विचारण न्यायालय द्वारा मृत्युदंड या आजीवन कारावास का दंडादेश अधिरोपित किया गया है और उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पुष्ट किया गया है, संबंधित दोषसिद्ध को इस न्यायालय में विशेष अनुमति के माध्यम से आगे अपील दायर करके ऐसे निर्णय का परीक्षण कराने का अवसर प्राप्त होगा। अत्यधिक सावधानी के तौर पर और संहिता तथा दण्डिक न्यायशास्त्र के विहित कानून के अनुसार, हम यह कह सकते हैं कि ऐसे विनिर्दिष्ट गंभीर अपराधों में दोष के प्रारंभिक निष्कर्ष और मृत्युदंड या आजीवन कारावास की सजा अधिरोपित करने के बाद, जब मामला उच्च न्यायालय की खंडपीठ की संवीक्षा के अंतर्गत आता है, तब यह केवल उच्च न्यायालय ही है जो दण्ड संहिता के तहत वह शक्ति प्राप्त करता है, जो मृत्युदंड और वैकल्पिक दंडादेश विहित करती है, कि वह उक्त दंडादेश को या तो दोषसिद्ध व्यक्ति के पूरे जीवन के लिए या 14 वर्ष से

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



अधिक की किसी विशिष्ट अवधि, जैसे 20, 30 या इसी तरह, किए गए अपराध की गंभीरता और ऐसे सिद्ध हुए अपराध के अनुरूप न्यायिक अंतरात्मा के प्रयोग के आधार पर परिवर्तित कर सके।”

(विशेष बल दिया गया)

"105. "अतः, हम यह दोहराते हैं कि ऐसे विनिर्दिष्ट अपराधों के लिए दण्ड संहिता में उपबंधित दण्ड के भीतर किसी भी संशोधित दण्ड के लिए दण्ड संहिता से प्राप्त शक्ति का प्रयोग केवल उच्च न्यायालय द्वारा और आगे अपील दायर होने की स्थिति में केवल उच्चतम न्यायालय द्वारा ही किया जा सकता है, न कि इस देश के किसी अन्य न्यायालय द्वारा। इसे दूसरे शब्दों में कहें तो, मृत्युदंड के विकल्प के रूप में कारावास की किसी विशिष्ट अवधि या दोषसिद्ध के जीवन के अंत तक के लिए संशोधित दण्ड अधिरोपित करने की शक्ति का प्रयोग केवल उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय द्वारा ही किया जा सकता है, न कि किसी अन्य अवर न्यायालय द्वारा।”

(विशेष बल दिया गया)

43. इसके अतिरिक्त, माननीय उच्चतम न्यायालय ने 'शिव कुमार बनाम कर्नाटक राज्य', जो (2023) 9 एससीसी 817 में प्रतिवेदित है, के वाद में; वी. श्रीहरन (उपर्युक्त) और स्वामी श्रद्धानंद (2) (उपर्युक्त) के उपर्युक्त दोनों निर्णयों पर विचार करने के बाद; पैराग्राफ संख्या 14 में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:

"14. 'अतः, हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि उन मामलों में भी जहाँ मृत्युदंड अधिरोपित नहीं किया गया है या प्रस्तावित नहीं है, संवैधानिक न्यायालय हमेशा एक संशोधित या निश्चित अवधि के दंडादेश अधिरोपित करने की शक्ति का प्रयोग यह निर्देश देकर कर सकते हैं कि आजीवन कारावास, जैसा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 53 में "द्वितीयतः" के रूप में परिकल्पित है, चौदह वर्ष से अधिक की एक निश्चित अवधि के लिए होगा, उदाहरण के लिए, बीस वर्ष, तीस वर्ष और इसी तरह। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 433-ए के जनादेश के दृष्टिगत निश्चित दण्ड 14 वर्ष से कम की अवधि के लिए नहीं हो सकता।”

(विशेष बल दिया गया)"

71. जहाँ तक वर्तमान मामले का प्रश्न है, कानून के उक्त प्रस्ताव और समग्र तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए, हमारा मानना है कि हमें एक ओर एकत्र किए गए साक्ष्यों के आधार पर दोषी की आपराधिक जवाबदेही और दूसरी ओर उस जवाबदेही के कारण दिए जाने वाले दंडादेश की मात्रा के बीच संतुलन बनाने की आवश्यकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि किया गया अपराध अत्यंत जघन्य है, अपराध गंभीर है और इसका गहरा सामाजिक प्रभाव है, क्योंकि यह एक व्यस्त बाजार में किया गया था, जिससे दुकानदारों के बीच डर पैदा हुआ और सार्वजनिक व्यवस्था भंग हुई। इस प्रकृति के अपराध सभ्य समाज की नींव पर प्रहार करते हैं और सामान्यतः किसी उदारता की मांग नहीं करते हैं। हालांकि, इस न्यायालय को एक उदाहरण पेश

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



करके बड़े पैमाने पर समाज और व्यक्तिगत अपराधी के सुधारात्मक अधिकार एवं उसकी स्पष्ट जिम्मेदारियों के बीच न्याय का तालमेल बिठाने की आवश्यकता है।

72. यह न्यायालय पाता है कि अभिलेख पर आया है कि अपीलार्थी ने शाम को दुकानदार पर गोली चलाई थी, जब अधिकांश दुकानें खुली थीं और व्यापार कर रही थीं। हालांकि, गोलीबारी ने न केवल मृतक मनोज सोनी के जीवन का अंत कर दिया, बल्कि अन्य दुकानदारों को भी अपनी शटर बंद करने के लिए मजबूर कर दिया, विरोध के तौर पर नहीं बल्कि आतंक और भय के कारण, जो व्यापार या बड़े पैमाने पर समाज की प्रगति के लिए अच्छा नहीं है। व्यवसाय शांति और सुरक्षा पर फलता-फूलता है। यदि सुरक्षा ही खतरे में है, जहाँ कोई भी आकर किसी भोले-भाले दुकानदार को गोली मार सकता है या डकैती कर सकता है, तो क्षेत्र की शांति खतरे में पड़ना तय है। किसी भी स्थिति में, सभ्य समाज में इस तरह के कृत्य को स्वीकार नहीं किया जा सकता।
73. उपरोक्त के बावजूद, यह न्यायालय पाता है कि यद्यपि अपीलार्थी को प्राकृतिक जीवन भर के कारावास का दंडादेश दिया गया है, तथापि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा ऐसा कठोर कदम उठाने का कोई कारण नहीं बताया गया है। इसके अलावा, हम पाते हैं कि प्राकृतिक जीवन के लिए दंडादेश का सामान्य अर्थ बिना किसी छूट आदि के व्यक्ति के पूरे जीवन के लिए कारावास है, जो माननीय सर्वोच्च न्यायालय के हालिया निर्णय किरण बनाम कर्नाटक राज्य, 2025 INSC 1453 के अनुरूप नहीं है; जिसमें उनके लॉर्डशिप ने अभिनिर्धारित किया कि "14 वर्ष और मृत्युदंड के बीच के अंतर को पाटने के लिए वैकल्पिक दंडादेश की शक्ति सत्र न्यायालय द्वारा लागू नहीं की जा सकती। इसलिए, सत्र न्यायालय द्वारा आजीवन कारावास के दंडादेश को प्राकृतिक जीवन के अंत तक होने का निर्देश नहीं दिया जा सकता, क्योंकि ऐसा निर्देश दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के प्रतिकूल होगा"।
74. वर्तमान मामले के समग्र तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, अपराध की गंभीरता को आनुपातिकता, सुधार और न्याय के सिद्धांतों के साथ संतुलित करते हुए, यह न्यायालय इस सुविचारित मत का है कि यदि अपीलार्थी को मामले के वर्तमान तथ्यों और परिस्थितियों में कारावास की एक निश्चित अवधि दी जाती है, तो न्याय होगा। तदनुसार, धारा 302 के तहत दोषसिद्धि को बरकरार रखते हुए, अपीलार्थी सोबरन लाल को दिए गए अधिकतम आजीवन कारावास को बिना किसी छूट के 18 (अठारह वर्ष) के निश्चित अवधि के सश्रम कारावास में कम किया जाता है। हालांकि, धारा 302 के तहत अर्थदंड और धारा 307, 393 तथा धारा 3/25 आयुध अधिनियम के तहत दंडादेश और अर्थदंड में कोई बदलाव नहीं किया जा रहा है और उन्हें पुष्ट किया जाता है। इस प्रकार अपील केवल दंडादेश के संशोधन तक आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है और उस सीमा तक खारिज की जाती है।
75. परिणामस्वरूप, सोबरन लाल की वर्तमान अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है। जहाँ अपीलार्थी की दोषसिद्धि की पुष्टि की जाती है, वहीं धारा 302 के तहत दिए गए शेष प्राकृतिक जीवन के कारावास के दंडादेश को संशोधित कर बिना किसी छूट के अठारह वर्ष के सश्रम कारावास की निश्चित अवधि में परिवर्तित किया जाता है, साथ ही विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित और दोषसिद्धि एवं दंडादेश के आक्षेपित निर्णय दिनांक 04.08.2012 में निर्धारित अर्थदंड भी बना रहेगा।
76. ऐसा कहने के बाद, यह निर्देशित किया जाता है कि अपीलार्थी- सोबरन लाल को (i) सत्र विचारण संख्या 854/2008 (राज्य बनाम हरि ओम उर्फ बंटू एवं अन्य) और (ii) सत्र विचारण संख्या

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



855/2008 (राज्य बनाम सोबरन लाल) के तहत बिना किसी छूट के 18 वर्ष के सश्रम कारावास का उक्त दंडादेश भुगतने के बाद ही रिहा किया जाएगा। जेल अधिकारियों को तदनुसार हिरासत की अवधि की गणना करने का निर्देश दिया जाता है, जिसमें अपीलार्थी को कानून के अनुसार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 और 428 का लाभ दिया जाएगा।

77. लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(अवधेश कुमार चौधरी, न्यायमूर्ति) (राजेश सिंह चौहान, न्यायमूर्ति)

30 जनवरी, 2026

अनुज सिंह

Translated version. Not for Legal Use.

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"